भगवानदास मोरवाल के उपन्यासों में आदिवासी जीवन

[रेत और काला पहाड़ के विशेष संदर्भ में]

कोर्स कोड एवं शीर्षक: HIN – 675 शोध प्रबंध

श्रेयांक: 16

स्नातकोत्तर कला (हिंदी)

की उपाधि हेतु प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध

शोधार्थी

शिनतल सुधाकर दाभोलकर

अनुक्रमांक: **22P0140008**

PR Number: **201809232**

मार्गदर्शक

प्रो. दीपक प्रभाकर वरक

शणै गोंयबाब भाषा और साहित्य संकाय

हिंदी अध्ययन शाखा

गोवा विश्वविद्यालय

अप्रैल 2024

परीक्षक:

Seal of the School

DECLARATION BY STUDENT

I hereby declare that the data presented in this Dissertation report entitled, **“भगवानदास मोरवाल के उपन्यासों में आदिवासी जीवन [रेत और काला पहाड़ उपन्यास के विशेष संदर्भ में]”** is based on the results of investigations carried out by me in the Discipline of Hindi at Shenoi Goembab School of Languages and Literature, Goa University under the Supervision of **Mr. Deepak Prabhakar Varak** and the same has not been submitted elsewhere for the award of a degree or diploma by me. Further, I understand that Goa University or its authorities will be not be responsible for the correctness of observations/experimental or other findings given the dissertation. I hereby authorize the University authorities to upload this dissertation on the dissertation repository or anywhere else as the UGC regulations demand and make it available to any one as needed.

Dabholkar

Signature

Name: Shintal Sudhakar Dabholkar

Seat No. 22P0140008

Date: 16 April 2024

Place: Goa University

COMPLETION CERTIFICATE

This is to certify that the dissertation report **"भगवानदास मोरवाल के उपन्यासों में आदिवासी जीवन [रेत और काला पहाड़ उपन्यास के विशेष संदर्भ में]** is a bonafide work carried out by **Ms. Shintal Sudhakar Dabholkar** under my supervision in partial fulfilment of the requirements for the award of the degree of Master of Arts in the Discipline of Hindi at the Shenoi Goembab School of Languages and Literature, Goa University.

Signature

Mr. Deepak Prabhakar Varak

Signature

Professor Anuradha Wagle

Dean, SGSLL, Goa University.

School Stamp

GOA UNIVERSITY ★ SHENOI GOEMBAB SCHOOL OF LANGUAGES & LITERATURE ★ TALEIGAON PLATEAU

Date: 16 April 2024

Place: Goa University

DECLARATION BY STUDENT

I hereby declare that the data presented in this Internship report entitled, **"भगवानदास मोरवाल के उपन्यासों में आदिवासी जीवन [रेत और काला पहाड़ उपन्यास के विशेष संदर्भ में]"** is based on the results of investigations carried out by me in the **Master of Arts in Hindi** at the **Shenoi Goembab School of Languages and Literature**, Goa University, under the mentorship of **Mr. Deepak Prabhakar Varak** and the same has not been submitted elsewhere for the award of a degree or diploma by me. Further, I understand that Goa University or its authorities will be not be responsible for the correctness of observations/ experimental or other findings given the internship report/work.

Dabholkar

Signature

Name: Shintal Sudhakar Dabholkar

Seat no. 22P0140008

Date: 16 April 2024

Place: Goa University

COMPLETION CERTIFICATE

This is to certify that the internship report "भगवानदास मोरवाल के उपन्यासों में आदिवासी जीवन [रेत और काला पहाड़ उपन्यास के विशेष संदर्भ में] is a bonafide work carried o by **Ms. Shintal Sudhakar Dabholkar** under my mentorship in partial fulfilment of the requirements for the award of the degree of **Masters of Arts in Hindi** in the Discipline **Hindi** at the **Shenoi Goembab School of Languages and Literature**, Goa University.

Signature

Name: Mr.Deepak Prabhakar Varak

Date: 16 April 2024

Signature

Prof. Anuradha Wagle

Dean, SGSLL, Goa University

Date:

Place: Goa University

GOA UNIVERSITY SHENOI GOEMBAB SCHOOL OF LANGUAGES & LITERATURE TALEIGAON PLATEAU

अनुक्रम

अध्याय	विवरण	पृष्ठ संख्या
	कृतज्ञता ज्ञापन	x
	भूमिका	viii,ix
	अनुक्रम	v,vi,vii
1.	आदिवासी: अवधारणा एवं स्वरूप 1.1. आदिवासी: अर्थ एवं परिभाषा 1.1.1. आदिवासी: अर्थ 1.1.2. परिभाषा 1.2. आदिवासी लोगों का इतिहास 1.2.1. प्राचीन और पूर्व – औपनिवेशक काल 1.2.2. औपनिवेशक काल (18वी – 19वी शताब्दी) 1.2.3. स्वतंत्रता के बाद की अवधि (20वी सदी से आगे) 1.2.4. समसामयिक परिदृश्य 1.3. आदिवासी लोगों का जीवन 1.4. आदिवासी लोगों के आंदोलन	1 - 20

	1.5. आदिवासी लोगों की समस्याएं	
2	रेत और काला पहाड़ उपन्यास में अभिव्यक्त आदिवासी जीवन 2.1. रेत उपन्यास में अभिव्यक्त 2.1.1. सामाजिक जीवन 2.1.2. सांस्कृतिक जीवन 2.1.3. धार्मिक जीवन 2.1.4. स्त्री जीवन 2.2. काला पहाड़ उपन्यास में अभिव्यक्त 2.2.1. सामाजिक जीवन 2.2.2. सांस्कृतिक जीवन 2.2.3. धार्मिक जीवन 2.2.4. स्त्री जीवन	21–50
3	रेत और काला पहाड़ उपन्यासों का विश्लेषण और तुलनात्मक अध्ययन 3.1. रेत उपन्यास का विश्लेषण 3.2. काला पहाड़ उपन्यास का विश्लेषण 3.3. रेत और काला पहाड़ उपन्यास का तुलनात्मक अध्ययन	51–65

4	रेत और काला पहाड़ उपन्यासों की भाषा शैली 4.1. रेत उपन्यास की भाषा 4.2. रेत उपन्यास की शैली 4.3. काला पहाड़ उपन्यास की भाषा 4.4. काला पहाड़ उपन्यास की शैली	66–93
	उपसहार	94–96
	संदर्भ	97 – 100

भूमिका

भारत देश को एकता में अनेकता का प्रतीक माना जाता है। भारत में विविध धर्मों, संस्कृतियों, रीति रिवाजों तथा जातियों के अनेक लोग कई सदियों से एक साथ मिल झूलकर रहते आ रहे हैं। इसी समृद्ध भारत देश में कुछ ऐसे भी लोग रहते है, जिन्हें हम 'आदिवासी' लोग कहते है। यह लोग बहुत सदियों से भारत के मूल निवासी रहे हैं।

इन आदिवासी जनजातियों को लोगों के समक्ष लाने में साहित्य का सबसे बड़ा और महत्वपूर्ण योगदान रहा है। कहा जाता है की साहित्य कि साहित्य समाज का नव सृजन करता है। इसका एक उदाहरण है आदिवासी लोगों को एक पहचान देना। साहित्य के सदियों से हाशिए पर रखे इन लोगों को परिवर्तन की दिशा दिखाई है। आदिवासी साहित्य ने समाज में आदिवासियों के लिए एक अलग और नई पहचान बनाई है। यह साहित्य आदिवासियों के जीवन और समाज को अभिव्यक्त करता है। आदिवासी साहित्य लोगों का आदिवासियों के प्रति नजरिया बदलने का काम करता आ रहा है।

भगवानदास मोरवाल जी एक प्रसिद्ध लेखक है। उन्होंने अपने लेखन के माध्यम से समाज में एक बदलाव लाने का प्रयास किया है। भगवानदास मोरवाल जी का जन्म २३ जनवरी, १९६० हरियाणा के मेवात जिले के नगीना भाग में हुआ था। नगीना उनकी जन्मस्थली होने के कारण उनके साहित्य के इसका विशेष उल्लेख मिलता है। उनके ज्यादातर उपन्यासों की पृष्ठभूमि मेवात और वहाँ के लोगों ही रहे है। उन्होंने अपने लेखन के माध्यम से मेवात क्षेत्र की जनजातियों को उजागर किया है। मोरवाल जी अपने लेखन के माध्यम से पाठकों के समक्ष समाज का एक यथार्थ रूप अभिव्यक्त करते है। उन्होंने जातिवाद को अपने लेखन में दर्शाया है। 'रेत' और 'काला पहाड़' उनके दो ऐसे उपन्यास है जो मेवात के जातिवाद को चित्रित करते है। अपने इन दो उपन्यासों की सहायता से भगवानदास मोरवाल जी ने उन अनछुए क्षेत्रों पर प्रकाश डाला है जो न जाने कितने समय से हाशिए पर थे।

'भगवानदास मोरवाल के उपन्यासों में आदिवासी जीवन [रेत और काला पहाड़ के विशेष संदर्भ में]' लघु शोध प्रधान को चार अध्यायों में विभाजित किया गया है।

प्रथम अध्याय: आदिवासी अवधारणा एवं स्वरूप

प्रस्तुत अध्ययन में आदिवासी शब्द का अर्थ और परिभाषा को स्पष्ट किया है। इसके साथ साथ इसके आदिवासी लोगों के इतिहास, उनके जीवन जीने की शैली, उनके कुछ महत्वपूर्ण आंदोलन और समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है।

द्वितीय अध्याय : 'रेत' और 'काला पहाड़' उपन्यास के अभिव्यक्त आदिवासी जीवन

इस अध्याय में रेत और काला पहाड़ उपन्यासों में अभिव्यक्त सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और स्त्री जीवन के बारे में लिखा है।

तृतीय अध्याय : 'रेत' और 'काला पहाड़' उपन्यासों का विश्लेषण और तुलनात्मक अध्ययन

तृतीय अध्याय में रेत और काला पहाड़ उपन्यास का विश्लेषण किया गया है। इसके साथ ही रेत और काला पहाड़ उपन्यास की तुलना करके उसका तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

चौथा अध्याय 'रेत' और 'काला पहाड़' उपन्यासों की भाषा शैली

इस अंतिम अध्याय में दोनों उपन्यासों की भाषा और शैली के बारे में लिखा गया है। उपन्यासों में आए दूसरी भाषा के शब्दों को भी उजागर किया है।

उपसहार

इस में समग्र लघु शोध प्रबंध को ध्यान में रखते हुए उसमें जो निष्कर्ष प्राप्त हुआ है उन्हें उपसाहार के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

अंत में संदर्भ ग्रंथ सूची को प्रस्तुत किया गया है।

कृतज्ञता ज्ञापन

प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध की रचना में मेरी अनेक प्रेरणाएं रही है। सबसे पहले मेरे इस लघु शोध प्रबंध के मार्गदर्शक एवं हमारे आधारणीय प्रोफेसर दीपक वरक जी का मैं तहे दिल से शुक्रिया अदा करती हूं, जिन्होंने न सिर्फ मेरा मार्गदर्शन किया अपितु मुझे अनेकों बार प्रोत्साहित भी किया। उनका इस लघु शोध कार्य में बहुत बड़ा योगदान रहा है। मैं उनकी बहुत आभारी हूं।

मैं हमारे विभाग की प्रोफेसर श्वेता गोवेकर जी का भी धन्यवाद करती हूं, जिन्होंने हमें हमारे प्रथम वर्ष के पाठ्यक्रम में 'गायब होता देश' यह पाठ पढ़ाया था जिससे प्रभावित होकर मैंने आदिवासी जीवन को जानने और समझने के लिए उनपर अपना लघु शोध करने का निर्णय लिया। मैम ने मुझे अनेक सलाह दी है, उसके लिए मैंने हमेशा उनकी आभारी रहूंगी।

इसके साथ साथ मैं हमारे विभाग के सभी आध्यापको का शुक्रिया अदा करती हु, जिन्होंने जरूरत के समय लघु शोध के बारे में छोटी मोटी जानकारी देकर हमारी मदत कि है।

मैं अपने माता- पिता के सहयोग के लिए भी उनकी सुकरगुजार हूं। उन्होंने प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से मेरी सहयता की है।

दिनांक: 16 अप्रैल 2024

Dabholkar

शिन्तल सुधाकर दाभोलकर

ATMANIRBHAR BHARAT
SWAYAMPURNA GOA

गोंय विद्यापीठ
ताळगांव पठार,
गोंय – ४०३ २०६
फोन : +९१–८६६९६०९०४८

(Accredited by NAAC)

Goa University
Taleigao Plateau, Goa-403 206
Tel : +91-8669609048
Email : registrar@unigoa.ac.in
Website : www.unigoa.ac.in

Ref. No.: GU/LIB/ATTENDANCE CERT./2024/ 250

Date: 03/05/2024

TO WHOM SO EVER IT MAY CONCERN

This is to certify that Miss Shintal Sudhakar Dabholkar a student of Goa University, M.A. (Hindi), visited the Goa University Library for her reference work on the following dates and completed 12 Hours & 26 Minutes of research internship as a part of her M.A. dissertation.

The detailed dates and times she visited are attached herewith.

This certificate has been issued at the written request of Assistant Professor Deepak Prabhakar Varak.

3/5/24

University Librarian
(Dr. Sandesh B. Dessai)

Dr. Sandesh B. Dessai
UNIVERSITY LIBRARIAN
Goa University
Taleigao - Goa.

GOA UNIVERSITY LIBRARY GOA

VISITS TO GOA UNIVERSITY LIBRARY

SR.NO.	DATE	TIMING	TIME SPENT
1.	26/04/2023	04:06 – 04:40	34 mins
2.	28/04/2023	11:25 – 11:59	34 mins
3.	28/06/2023	01:09 – 01:45	36 mins
4.	04/07/2023	11:15 – 01:32	2 hours 17 mins
5.	17/07/2023	03:51 – 03:56	5 mins
6.	07/08/2023	01:35 – 02:50	1 hour 15 mins
7.	25/08/2023	01:20 – 01:27	7 mins
8.	31/08/2023	01:53 – 01:56	3 mins
9.	12/09/2023	04:28 – 04:30	2 mins
10.	05/10/2023	01:32 – 04:32	3 hours
11.	17/10/2023	12:20–12:34	14 mins
12.	20/11/2023	12:15 – 01:16	1 hour 1 min
13.	10/01/2024	11:18 – 11:55	37 mins
14.	12/01/2024	11:38 – 01:07	1 hour 29 mins
15.	15/02/2024	12:35 – 01:07	32 mins
Total hours			**12 Hours 26 Minutes**

Signature of the Guide
(Asst. Prof. Deepak Prabhakar Varak)

Signature of the University Librarian
Dr. Sandesh B. Dessai

Signature of the Student
Miss Shintal Sudhakar Dabholkar

प्रथम अध्याय : आदिवासी अवधारणा एवं स्वरूप

आदिवासी स्वदेशी लोग हैं और माना जाता है कि वे भारत के पहले निवासी हैं। आदिवासियों का अर्थ है मूल निवासी या समुदाय जो अक्सर जंगलों के करीब रहते हैं। आदिवासियों की अलग-अलग भाषाएँ, धर्म और स्वशासन के रूप हैं, साथ ही उनकी अपनी भूमि से गहरा जुड़ाव और प्रकृति के प्रति सम्मान भी है। भारत की लगभग 8 प्रतिशत आबादी आदिवासी है। भारत में 500 से अधिक विभिन्न आदिवासी समूह हैं। मध्य प्रदेश, उड़ीसा, गुजरात, महाराष्ट्र, राजस्थान, आंध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखंड, पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों और असम, मणिपुर, अरुणाचल प्रदेश, मेघालय, मिजोरम, नागालैंड और त्रिपुरा जैसे उत्तर-पूर्वी राज्यों में आदिवासी असाधारण रूप से विविध हैं।

1.1. आदिवासी : अर्थ एवं परिभाषा

1.1.1. आदिवासी : अर्थ –

आदिवासी भारतीय उपमहाद्वीप में विविध जनजातीय समूह हैं। “आदिवासी” शब्द हमारे दिमाग में अर्ध नग्न पुरुषों और महिलाओं की छवि बनाता है, जो तीर और भाले चलाते हैं, सिर पर पंख पहनते हैं और अस्पष्ट भाषा बोलते हैं।

‘आदिवासी’ यह एक संस्कृत शब्द हैं। यह शब्द १९३० के दशक में राजनीतिक कार्यकर्ताओं द्वारा आदिवासी लोगों को स्वदेशी मूल का दावा करके स्वदेशी

पहचान देने के लिए लिया गया एक संस्कृत शब्द है। ‘आदिवासी’ यह शब्द मूल रूप से दो शब्द आदि और वासी के मिलव से बना है। ‘आदि’ का अर्थ होता है पहला या आरंभिक और ‘वासी’ का अर्थ होता है मूल निवासी। इस शब्द का प्रयोग भारतीय उपजातियों के लिए किया जाता है, जो प्राचीन रूप से जंगलों और पहाड़ी क्षेत्रों में निवास करते हैं। “प्रारंभ में इस शब्द का प्रयोग अंग्रेजी शब्द Primitive के अर्थ में हुआ, जिसका तात्पर्य है– वे कबीले जो सभ्यता के सबसे निचले स्तर पर विद्यमान है तथा जिनकी संस्कृति का पूर्ण विकास नहीं हुआ है।”[1]

इस सभ्य दुनिया ने इन समुदायों को मूलनिवासी, असभ्य लोग, आदिवासी, आदिवासी, जनजातीय, स्वदेशी, असंपर्क लोग और ऐसे कई अन्य शब्दों से लेबल किया। भारत में इन्हें आमतौर पर आदिवासी/गिरिजन भी कहा जाता है। संस्कृत ग्रंथ और पुरातन लेखों में आदिवासियों को आत्विका और वनवासी कहा गया हैं। भारतीय संविधान में इन्हे अनुसूचित जनजाति (Schedule Tribes) भी कहा गया है।

इनके लिए अनेक नामों का प्रयोग किया गया है जैसे वनवासी, जंगली, भूमिपुत्र, वनपुत्र, आदिपूत्र, आदिसंतान, वन्य जनजाति, पहाड़ी, आदिम जाति आदि। अंग्रेजी में इन्हे शेड्यूल ट्राइब्स, फॉरेस्ट ट्राइब्स, एनिमिस्ट्स, ट्राइबल रिलिजन और ट्राइब्स जैसे अनेक नामों से इन्हे संबोधित किया जाता हैं।

1.1.2. परिभाषाएं –

आदिवासी इस शब्द को परिभाषित करने के लिए मत और विचार हमारे सामने उपलब्ध हैं।

- **ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी**

  "एकाधिकारी परिवारों से बने परंपरागत समाज का वह वर्ग जो सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, भाषिक तथा रक्त के स्तर पर बंधे है और जो एक क्षेत्रीय नेतृत्व के अधीन रहते आए हैं।"[2]

- **भारतीय संस्कृति कोश**

  "आर्य और द्रविड़ भारत के इन दो मानव – समाज को छोड़कर उनसे भी पूर्व भारत में रहने वाले अथवा दूसरे देश से आकर वन पर्वत इनके आश्रय में निवासिय जातिय समूह को वन्य जाति अथवा आदिवासी कहा जाता है।"[3]

- **इंपीरियल गजेटियर ऑफ इंडिया**

  "किसी सामान्य नाम व भाषा से संबंधित किसी भूभाग पर रहने वाले परिवार समूह को आदिवासी के रूप में रेखांकित किया गया है।"[4]

- **प्रो गिलानी**

इनके मतानुसार, “एक विशिष्ट भू – प्रदेश में रहने वाला, समान बोली बोलने वाला, अक्षरों की पहचान न होने वाला, समूह, गुट, आदिवासी समाज कहलाते हैं।”[5]

- **डॉ. विवेकी राय**

डॉ. राय ने भी, “पिछड़े अंचलों, पहाड़ों, वनों के निवासियों को आदिम – आदिवासी माना है।”[6]

- **डॉ. रिव्हर्स**

इनका कहना है कि, “जनजाति अर्थात् ऐसा सामाजिक समूह जिसकी एक सामान्य भाषा रहती है और वह सामान्य उद्देश्यों के लिए संघटित रूप से कार्य करता है।”[7]

- **डॉ. मजूमदार**

इनका मानना है कि, “आदिम जनजाति अर्थात् सामान्य नाम, सामान्य बोली एवं सामान्य भूभाग को धारण करने वाला समूह, यह समूह विवाह और व्यवहार के बारे में कुछ विशिष्ट निषेध का पालन करते हुए अपने समाज में परस्पर संबंधों और कर्तव्यों के निर्धारण में पहचान का बोध कराता है।”[8]

- **ए. आर. देसाई**

“Tribal communities or those who are still continod to the original forest habitats and follow the old pattorn of life.

अर्थात् आदिवासी समाज अथवा जो समाज अभी भी जंगल में रहता है और पुरानी पद्धति से जीवन यापन करता है।

Semi – tribal communities or these who have more or less setted down in rural areas and have taken to agriculture and allied occupations.

अर्थात्, आदिवासी समाज की उपजाति या वह समाज जो बहुतायत से या कुछ कुछ मात्रा में ग्रामीण क्षेत्र में निवासित है और जिन्होंने कृषि और उससे जुड़े व्यवसाय को अपनाया है।"[9]

- **डॉ. गोविन्द गारे**

यह कहते है कि, "आदिवासी हा शब्द oboriginal या इंग्लिश शब्दावरुन आला आहे, यूरोपियन लोकांनी जेव्हा अमेरिका, दक्षिण आणि पूर्व आफ्रिका, ऑस्ट्रेलिया हया भू प्रदेशात वसाहति स्थापल्या तेव्हा आधी पासून तिथे राहणाऱ्या रहिवाशांना त्यांनी oboriginal आदिवासी (मुलचे रहिवासी) असे नाव दिले. भारतातील लोकांबद्दल मात्र त्याणी Naïve (एतद्देशीय) ह्या शब्दाचा उपयोग केला, हिंदुस्तान आर्याचे आगमन होण्या पूर्वी अनेक टोल्या Tribes राहत होत्या, तेच या देशाचे मुळ रहिवासी त्यांना भूमिज, भूमीज, आदिम, असाहि नावांनी ओळखले जाई।"[10]

उपयुक्त सभी परिभाषाओं से यह ज्ञात होता है कि आदिवासी इस देश के मूल निवासी रहे है। उनकी अपनी एक अलग पहचान और संस्कृति है। आदिवासी समुदायों में कोई पदानुक्रम नहीं है। वे जाति व्यवस्था के सिद्धांतों के इर्द-गिर्द संगठित समुदायों से बिल्कुल अलग हैं। आदिवासियों का धर्म इस्लाम, हिंदू धर्म या ईसाई धर्म से अलग है।

1.2. आदिवासी लोगों का इतिहास

भारत में जनजातीय लोगों का इतिहास व्यापक और विविध है, जिसमें शताब्दियों तक स्वदेशी उपस्थिति और सांस्कृतिक विकास शामिल है।

1.2.1. प्राचीन और पूर्व-औपनिवेशिक काल

- **प्रारंभिक बस्तियाँ :**

जनजातीय समुदाय, जिन्हें आदिवासी भी कहा जाता है, भारतीय उपमहाद्वीप के सबसे शुरुआती निवासियों में से एक माने जाते हैं। उनकी प्राचीन जड़ें हैं जिनका पता प्रागैतिहासिक काल ppमें लगाया जा सकता है, विभिन्न क्षेत्रों में उनकी उपस्थिति के प्रमाण मिलते हैं।

- **सांस्कृतिक विविधता :**

भारत की जनजातीय आबादी अविश्वसनीय रूप से विविध है, जिसमें अलग-अलग भाषाओं, रीति-रिवाजों और परंपराओं वाले कई जातीय समूह शामिल हैं। इन समूहों ने देश भर में जंगल में रहने वाले समुदायों से लेकर पहाड़ी इलाकों और मैदानों तक विभिन्न पारिस्थितिक क्षेत्रों पर कब्जा कर लिया।

- **जीवन शैली और अर्थव्यवस्था :**

आदिवासी समाज ऐतिहासिक रूप से प्रचलित है कृषि, शिकार, संग्रहण और पशुचारण का अभ्यास करते थे। उन्होंने स्थानीय पारिस्थितिकी तंत्र का जटिल ज्ञान विकसित किया, जिसने उनकी संसाधन प्रबंधन रणनीतियों को निर्देशित किया।

- **सामाजिक संगठन :**

जनजातीय समुदायों की अपनी सामाजिक संरचनाएँ और शासन प्रणालियाँ थीं, जो अक्सर कुलों या रिश्तेदारी समूहों के आसपास संगठित होती थीं। कुछ जनजातियाँ मातृसत्तात्मक थीं, जहाँ वंश और विरासत माता की वंशावली से होकर गुजरती थी।

1.2.2. औपनिवेशिक काल (18वीं-19वीं शताब्दी)

- **ब्रिटिश शासन का प्रभाव :**

ब्रिटिश औपनिवेशिक नीतियों ने आदिवासी समुदायों पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाला। वन कानूनों, भूमि राजस्व प्रणालियों और वाणिज्यिक शोषण ने पारंपरिक आजीविका को बाधित कर दिया और पैतृक भूमि से अलगाव पैदा कर दिया।

- **ईसाई मिशनरीज और शिक्षा :**

इस अवधि के दौरान, ईसाई मिशनरियों ने स्कूलों की स्थापना और आदिवासी बच्चों को शिक्षा प्रदान करने में भूमिका निभाई। हालाँकि इससे साक्षरता और आधुनिक विचारों का प्रसार हुआ, इसने कभी-कभी पारंपरिक मान्यताओं को भी नष्ट कर दिया।

1.2.3. स्वतंत्रता के बाद की अवधि (20वीं सदी से आगे)

- **एकीकरण और आत्मसात :**

1947 में भारत को स्वतंत्रता मिलने के बाद, आदिवासी समुदायों को मुख्यधारा के समाज में एकीकृत करने के प्रयास किए गए। इसमें शिक्षा और सरकारी नौकरियों में आरक्षण का प्रावधान शामिल था, जिसका उद्देश्य सामाजिक-आर्थिक रूप से हाशिए पर रहने वाली जनजातियों का उत्थान करना था।

- **जनजातीय विद्रोह और आंदोलन :**

कुछ जनजातीय समुदायों ने, खुद को हाशिए पर और शोषित महसूस करते हुए, भूमि अधिकार, स्वायत्तता और अपनी सांस्कृतिक पहचान की मान्यता की मांग को लेकर आंदोलनों और विरोध प्रदर्शनों का आयोजन किया। उदाहरणों में झारखंड आंदोलन और नक्सली आंदोलन शामिल हैं।

- **कानूनी सुरक्षा और नीतियां :**

भारतीय संविधान अनुसूचित जनजातियों (एसटी) को मान्यता देता है और भूमि, संसाधनों और सरकार में प्रतिनिधित्व के उनके अधिकारों की रक्षा करता है। पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों तक विस्तार) अधिनियम (पीईएसए) और वन अधिकार अधिनियम (एफआरए) जैसे अधिनियम आदिवासी समुदायों को सशक्त बनाने का प्रयास करते हैं।

1.2.4. समसामयिक परिदृश्य

- **सांस्कृतिक पुनरुद्धार :**

आदिवासी कला रूपों, भाषाओं और रीति-रिवाजों को पुनर्जीवित और संरक्षित करने के प्रयास चल रहे हैं। सांस्कृतिक उत्सव और संग्रहालय जनजातीय विरासत को व्यापक दर्शकों के सामने प्रदर्शित करते हैं।

- **विकास पहल :**

विभिन्न सरकारी और गैर-सरकारी संगठन शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल और कौशल विकास पर ध्यान केंद्रित करते हुए आदिवासी समुदायों के बीच सतत विकास और आजीविका बढ़ाने की दिशा में काम कर रहे हैं।

- **राजनीतिक प्रतिनिधित्व :**

जनजातियों को विभिन्न स्तरों पर विधायी निकायों में आरक्षित सीटों के माध्यम से राजनीतिक प्रतिनिधित्व मिलता है, जिससे यह सुनिश्चित होता है कि निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में उनकी आवाज़ सुनी जाए।

1.3. आदिवासी लोगों का जीवन

आदिवासी स्वदेशी लोग हैं और माना जाता है कि वे भारत के पहले निवासी हैं। आदिवासियों की अलग-अलग भाषाएँ, धर्म और स्वशासन के रूप हैं, साथ ही उनकी अपनी भूमि से गहरा जुड़ाव और प्रकृति के प्रति सम्मान भी है। भारत की ८% आबादी आदिवासी है। भारत में ५०० से अधिक विभिन्न आदिवासी समूह हैं। आदिवासी समुदायों में कोई पदानुक्रम नहीं है। वे जाति व्यवस्था के सिद्धांतों के इर्द-गिर्द संगठित समुदायों से बिल्कुल अलग हैं।

भारत में इनकी ८.६% जनसंख्या पाई जाती है। साल २०११ के जनगणना के अनुसार भारत में कुल १० करोड़ आदिवासी लोग पाए गए थे। भारत के मध्य भागो में इनकी जनसंख्या अधिक मात्रा में पाई जाती है। भारत में ज्यादातर आदिवासी उड़ीसा, छत्तीसगढ़, राजस्थान, मध्यप्रदेश, गुजरात, बिहार, झारखंड, पश्चिम बंगाल, मीजोराम और अंद्रप्रदेश में बसे हुए पाए जाते है। आदिवासी लोगों की कुछ विशेष जनजातियां जैसे गौंड और अहोम इनके बहुत बड़े राज्य रहे हैं। इनके दो राज्यों के अलावा भारत में कुरुम्ब, इरुला, पनिया, असुर, सारवा, उंराव, संथाल, भील, काडर, हो, मुण्डा, गोण्ड, टोडा, खासी, कंजर, भीलाला, पावरा, बोरला, पटेलिया, राठवा, वासवे, गावीत, थारू, वारली, कातकरी, अण्डमान द्वीप निवासी जनजाति आदि अनेक प्रमुख आदिवासी जनजातियां भी पाई जाती है।

जंगल, जमीन, जल इन लोगों की अस्मिता के लिए अति आवश्यक बिंदु हैं। यह लोग अपने जंगल और जमीन के सच्चे और नेख रखवाले रहे है। इनकी संख्या अधिकतर जंगलों और पहाड़ों पर पाई जाती है। इनका अपना एक विशेष धर्म होता है। यह लोग प्रकृति सेवक होने के साथ – साथ प्रकृति पूजक भी कहलाते है। इनकी पर्वत, वन, नदियों और सूर्य में बड़ी मान्यता होती हैं। कई आदिवासी व्यापक रूप से फैले गांवों में रहते हैं, जिनके परिवार खेतों से घिरे खेतों में रहते हैं। आदिवासी पारंपरिक रूप से जंगल में शिकार करते हैं और भोजन एकत्र करते हैं।

आदिवासी बहुत सादा जीवन जीते हैं। वे सबसे साधारण कपड़े पहनते हैं, जो कभी-कभी पत्तियों और फूलों से बने होते हैं, वे फलों, सब्जियों पर जीवित रहते हैं, विभिन्न वन उत्पादों से दवाएं तैयार करते हैं। वे जंगलों से लकड़ियाँ लेते हैं और अपना भोजन बनाते हैं, पत्तियों और फूलों से आभूषण और सजावटी सामान, बांस की टोकरियाँ, पत्तियों से प्लेटें आदि तैयार करते हैं और उन्हें अपनी आजीविका कमाने के लिए बाजार में बेचते हैं। वे प्रकृति, पहाड़ों, जंगलों और पहाड़ियों के बहुत करीब हैं। उनका मुख्य व्यवसाय खेती, मछली पकड़ना और वन उपज एकत्र करना है। आदिवासी अपनी आजीविका के लिए जंगलों पर निर्भर हैं। वे शिकार करने और आपातकालीन आपूर्ति इकट्ठा करने में भी अच्छे हैं। वे अपने भूगोल क्षेत्र के बारे में व्यापक ज्ञान रखने वाले शानदार तीरंदाज हैं।

आदिवासी लोग अपनी जीविका कमाने के लिए पैसा कमाने में विश्वास रखते हैं, वे स्थानांतरणीय होते हैं और नौकरी या काम की तलाश में एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में प्रवास करते हैं। वे खेतिहर मजदूर के रूप में काम करते हैं, भोजन जैसे अन्य उत्पादों के लिए उत्पाद बेचते हैं और वर्तमान अस्तित्व में, वे पैसे के लिए उत्पाद बेचते हैं। आदिवासी. लोगों के पास बीमारियों के इलाज, अलौकिक शक्तियों या बीमारियों, बीमारी, संक्रमण या किसी अन्य समस्या के इलाज में प्राकृतिक उत्पादों का उपयोग कैसे किया जाता है, इसके बारे में कुशल ज्ञान है।

आदिवासियों की पारंपरिक मातृभूमि को औद्योगीकरण के लिए ले लिया गया है; कोयला, वन और खनिज दोहन के लिए, पर्यटन विकास के लिए, और प्रकृति और वन्यजीव पार्कों के लिए। इस 'आंतरिक उपनिवेशीकरण' ने वैश्वीकरण की ताकतों के साथ मिलकर आदिवासियों को उनके क्षेत्रों से जबरन विस्थापित कर दिया है।

1.4. आदिवासी लोगो के आंदोलन

भारत में आदिवासी लोग अपने अधिकारों का दावा करने, अपनी सांस्कृतिक पहचान को संरक्षित करने, शोषण और हाशिए पर जाने का विरोध करने के उद्देश्य से विभिन्न संघर्ष आंदोलनों में शामिल रहे हैं। ये आंदोलन नीतियों को आकार देने और आदिवासी समुदायों के सामने आने वाले मुद्दों की ओर ध्यान आकर्षित करने में महत्वपूर्ण रहे हैं।

- **झारखंड आंदोलन:**

झारखंड आंदोलन, जिसे आदिवासी आंदोलन के रूप में भी जाना जाता है, 20वीं सदी की शुरुआत में दक्षिण बिहार के आदिवासी बहुल क्षेत्रों के लिए एक अलग राज्य की मांग के साथ उभरा। यह आंदोलन गंगा नारायण सिंह के नेतृत्व में किया गया था।

इस क्षेत्र में आदिवासियों को ब्रिटिश औपनिवेशिक नीतियों और उसके बाद गैर-आदिवासी जमींदारों और उद्योगों द्वारा शोषण के कारण भूमि अलगाव का सामना करना पड़ा।

इस आंदोलन ने 1980 के दशक में गति पकड़ी और अंततः वर्ष 2000 में झारखंड राज्य का निर्माण हुआ।

- **नक्सली आंदोलन:**

नक्सली आंदोलन, जिसकी शुरुआत 1967 में नक्सलबाड़ी (पश्चिम बंगाल) में हुई थी, की भारत के आदिवासी क्षेत्रों, विशेष रूप से छत्तीसगढ़, झारखंड, ओडिशा जैसे राज्यों और आंध्र प्रदेश और महाराष्ट्र के कुछ हिस्सों में महत्वपूर्ण उपस्थिति रही है। इस आंदोलन के मुख्य अधिकारी के रूप में चारु मजूमदार, कनु सन्याल और जंगाल संथाल दिखाई देते है।

जबकि आंदोलन की वैचारिक जड़ें मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धांतों में हैं, यह अक्सर हाशिए पर रहने वाले आदिवासी समुदायों के समर्थन को आकर्षित करता है जो राज्य और कॉर्पोरेट हितों से वंचित और शोषित महसूस करते हैं।

आदिवासी अक्सर भूमि हस्तांतरण, विकास परियोजनाओं के कारण विस्थापन और सामाजिक-आर्थिक अवसरों की कमी के मुद्दों के कारण आंदोलन में शामिल हो जाते हैं।

- **वन अधिकार संघर्ष:**

पूरे भारत में जनजातीय समुदाय वन अधिकार अधिनियम (2006) के तहत गारंटीकृत अपने वन अधिकारों की मान्यता और कार्यान्वयन के लिए संघर्ष में शामिल रहे हैं।

इन संघर्षों में आदिवासी समुदायों द्वारा पारंपरिक रूप से निवास और उपयोग की जाने वाली वन भूमि पर नियंत्रण की मांग के साथ-साथ बाहरी तत्वों द्वारा अवैध अतिक्रमण और शोषण का विरोध करना शामिल है।

- **खनन विरोधी विरोध:**

ओडिशा, झारखंड और छत्तीसगढ़ जैसे खनिज समृद्ध क्षेत्रों में आदिवासी समुदाय बड़े पैमाने पर खनन परियोजनाओं का सक्रिय रूप से विरोध कर रहे हैं जो उनकी आजीविका और पर्यावरण को खतरे में डालती हैं।

- **सांस्कृतिक संरक्षण हेतु अभियान:**

कई आदिवासी समुदायों ने पारंपरिक कला रूपों, भाषाओं और अनुष्ठानों सहित अपनी सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित और बढ़ावा देने के लिए अभियान चलाया है। आधुनिकीकरण और वैश्वीकरण के दबावों के बीच आदिवासी संस्कृति के लुप्तप्राय पहलुओं को दस्तावेजित करने और पुनर्जीवित करने का प्रयास किया जाता है।

- **राजनीतिक प्रतिनिधित्व के लिए आंदोलन:**

जनजातीय समुदाय उन आंदोलनों के माध्यम से शासन में राजनीतिक प्रतिनिधित्व और स्वायत्तता बढ़ाने की वकालत कर रहे हैं जो पंचायत

(अनुसूचित क्षेत्रों तक विस्तार) अधिनियम (पीईएसए) जैसे प्रावधानों के तहत विकेंद्रीकृत शासन संरचनाओं को मजबूत करना चाहते हैं।

- **भूमि कब्ज़ा और विस्थापन के विरुद्ध प्रतिरोध:**

आदिवासी अक्सर बांधों, राजमार्गों और औद्योगिक गलियारों जैसी बड़ी बुनियादी ढांचा परियोजनाओं के कारण भूमि हड़पने और जबरन विस्थापन का विरोध करते हैं। आंदोलनों का उद्देश्य प्रभावित आदिवासी समुदायों के लिए भूमि अधिकार, पर्याप्त मुआवजा और पुनर्वास सुरक्षित करना है।

1.5. आदिवासी लोगों की समस्याएं

भारत में आदिवासियों को कई प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

- **धार्मिक मुद्दे**

आदिवासी लोग अलौकिक शक्तियों में विश्वास करते हैं और उनकी पूजा भी करते हैं। इससे पढ़े-लिखे युवा लोगों के मन में कई सवाल पैदा होते है। अन्य संस्कृतियों के संपर्क में आने से जनजातीय संस्कृति में क्रांतिकारी परिवर्तन आ रहा है। आदिवासी लोग अपने सामाजिक जीवन के कई पहलुओं में पश्चिमी संस्कृति से मेल खाते हैं, जबकि वे अपनी संस्कृति को त्याग रहे हैं।

इसके परिणामस्वरूप जनजातीय जीवन और जनजातीय कलाओं जैसे नृत्य, संगीत और विभिन्न प्रकार के शिल्पों का पतन होता हुआ दिखाई देता है।

- **सामाजिक मुद्दे**

आदिवासियों को अपने अस्तित्व को बचाने के लिए समाज के सामान्य जातियों से संघर्ष करना पड़ता है। बिहार और आंध्र प्रदेश जैसे राज्यों में अभी भी

जनजातियों के बीच बाल विवाह की प्रथा है, जो संवैधानिक रूप से गलत है और इसके कई नकारात्मक परिणाम हैं। कुछ हिमालयी जनजातियाँ बहुपतित्व और बहुविवाह का हिसा बनती हैं।

ऐसी प्रथाओं को मुख्यधारा के समाज द्वारा स्वीकार नहीं किया जाता है। शिशुहत्या, मानवहत्या, पशुबलि, काला जादू, पत्नी की अदला-बदली और अन्य हानिकारक प्रथाएँ अभी भी जनजातियों द्वारा प्रचलित हैं, जिन्हें भारत में एक महत्वपूर्ण जनजातीय समस्या माना जाता है।

- **गरीबी**

अधिकांश जनजातियाँ गरीब हैं। जनजातियाँ प्रारंभिक प्रौद्योगिकी पर आधारित विभिन्न प्रकार के सरल व्यवसायों में संलग्न हैं। अधिकांश व्यवसाय शिकार, संग्रहण और कृषि जैसे प्राथमिक व्यवसाय हैं। ऐसे उद्देश्यों के लिए वे जिस तकनीक का उपयोग करते हैं वह सबसे बुनियादी प्रकार की होती है। ऐसी अर्थव्यवस्था में कोई लाभ या अधिशेष नहीं होता।

परिणामस्वरूप, उनकी प्रति व्यक्ति आय बहुत कम है, भारतीय औसत से बहुत कम है। बहुसंख्यक अत्यधिक गरीबी में रहते हैं और स्थानीय साहूकारों और जमींदारों के कर्ज में डूबे हुए हैं। वे कर्ज चुकाने के लिए अक्सर अपनी जमीन साहूकारों के पास गिरवी रख देते हैं या बेच देते हैं। भारत में कर्ज़ का बोझ एक लगभग अपरिहार्य जनजातीय समस्या है।

- **बेरोजगारी**

देश के मध्य क्षेत्र में औद्योगिक और खनन गतिविधियों को लेकर कई गतिविधियाँ चल रही हैं। भारतीय जनजातीय क्षेत्र के मध्य क्षेत्र में होने वाली तीव्र औद्योगिक गतिविधि के बावजूद, इन क्षेत्रों में बड़ी संख्या में जनजातीय लोग आधुनिक उद्यमों में कार्यरत नहीं हैं। उन्हें लगातार बढ़ते कम वेतन, अविश्वास, अस्थायी और कमजोर श्रम बाजार का खामियाजा भुगतना पड़ रहा है।

- **भूमि अधिकार एवं विस्थापन**

विकास परियोजनाओं, खनन और अन्य गतिविधियों के कारण कई आदिवासी समुदाय अपनी पारंपरिक भूमि से विस्थापित हो गए हैं। विकास परियोजनाओं, खनन और अन्य गतिविधियों के कारण कई आदिवासी समुदाय अपनी पारंपरिक भूमि से विस्थापित हो गए हैं।

गुजरात में सरदार सरोवर बांध ने हजारों आदिवासियों को उनकी पैतृक भूमि से विस्थापित कर दिया है।

- **शोषण और हाशियाकरण**

सरकारी अधिकारियों, जमींदारों और व्यापारियों जैसे शक्तिशाली समूहों द्वारा अक्सर उनका शोषण किया जाता है और उन्हें हाशिए पर रखा जाता है।

ओडिशा राज्य में आदिवासी आबादी खनन कंपनियों द्वारा शोषण का सामना कर रही है, जिन्होंने उनकी जमीन और संसाधनों पर कब्जा कर लिया है।

- **शिक्षा और स्वास्थ्य सेवा का अभाव**

शिक्षा और स्वास्थ्य देखभाल तक उनकी पहुंच सीमित है, जिसका उनके समग्र कल्याण और विकास पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। बहुत सारी स्वास्थ्य समस्याएं, जैसे कुपोषण, उचित स्वास्थ्य देखभाल तक पहुंच की कमी और संक्रामक रोगों की उच्च घटना विद्यमान है।

जनजातीय आबादी के बीच साक्षरता दर राष्ट्रीय औसत की तुलना में कम है और जनजातीय क्षेत्रों में स्वास्थ्य सुविधाएं अपर्याप्त हैं। अनुसूचित क्षेत्रों में सार्वजनिक स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली में डॉक्टरों, नर्सों, तकनीशियनों और प्रबंधकों के बीच कमी, रिक्ति, अनुपस्थिति या उदासीनता है।

आदिवासी छात्रों के बीच स्कूल छोड़ने की दर अविश्वसनीय रूप से अधिक है, खासकर माध्यमिक और वरिष्ठ माध्यमिक स्तर पर। हाल ही में ह्यूमन राइट्स की रिपोर्ट के अनुसार, उत्तर प्रदेश के सोनभद्र जिले के एक स्कूल के प्रिंसिपल ने कहा कि आदिवासी बच्चे स्कूल में एक “बड़ी समस्या” थे।

- **संस्कृति और परंपरा की हानि**

आधुनिकीकरण और उनके पारंपरिक जीवन शैली के क्षरण के कारण उन्होंने अपने पारंपरिक रीति-रिवाजों, भाषाओं और कलाओं को खो दिया है।

वैश्वीकरण और आधुनिकीकरण के प्रभाव के कारण ग्रेट अंडमानी जनजातियों की पारंपरिक प्रथाएँ और अनुष्ठान विलुप्त होने के कगार पर हैं।

- **आर्थिक दबाव**

आदिवासी कृषि, वानिकी और शिकार जैसे आजीविका के पारंपरिक रूपों में लगे हुए हैं, जो आधुनिकीकरण और वैश्वीकरण के सामने कम व्यवहार्य होते जा रहे हैं।

वन संसाधनों की उपलब्धता में गिरावट और खनन के प्रभाव के कारण झारखंड में मुंडा जनजातियों की पारंपरिक आजीविका खतरे में है।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1. डॉ. दवेरे शिवाजी, डॉ. खराटे मधु, समकालीन हिंदी उपन्यासों में आदिवासी विमर्श, विद्या प्रकाशन 2013, पृ. 14
2. शंभुनाथ, हिंदी साहित्य ज्ञानकोष, भारतीय भाषा परिषद कोलकाता 2019, संस्करण – 1, पृ. 446
3. शर्मा लीलाधर ‘पर्वतीय’, भारतीय संस्कृति कोश, राजपाल पब्लिशिंग 2013, पृ. 427
4. सिंह अनुराधा, आदिवासी: इतिहास और संस्कृति, वाणी प्रकाशन 2023, पृ. 15
5. डॉ. दवेरे शिवाजी, डॉ. खराटे मधु, समकालीन हिंदी उपन्यासों में आदिवासी विमर्श, विद्या प्रकाशन 2013, पृ. 13
6. वही, पृ. 13
7. वही, पृ. 35
8. वही, पृ. 35
9. देसाई ए आर, भारतीय ग्रामीण समाजशास्त्र, साहित्य भगवान पब्लिकेशंस 2020, पृ. 226
10. पत्रिका – आदिवासी प्रश्न, पृ. 1

द्वितीय अध्याय : 'रेत' और 'काला पहाड़' उपन्यास में अभिव्यक्त आदिवासी जीवन

2.1. 'रेत' उपन्यास में अभिव्यक्त :

2.1.1. सामाजिक जीवन –

मनुष्य समाज में रहता है और अपनी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति भी इसी समाज से करता है। इसीलिए मनुष्य को सामाजिक प्राणी कहा गया है। मानव, समाज में समुदाय बनाकर एवं संगठित होकर रहता है। प्रतिदिन की जरूरतों के लिए वह कुछ न कुछ समस्याओं से जूझता हुआ आगे बढ़ता है। अपनी जरूरतों के लिए बिना किसी को क्षति पहुँचाए अपने कार्य पूर्ण करना एक अच्छे समाज के चिह्न हैं।

- **भ्रष्ट समाज :**

रेत' उपन्यास में शराब जैसी चीज जो समाज में गैरकानूनी है, जिसे कानून से छुपा कर बेचा और खरीदा जाता है। उसी कंजर व्हिस्की (स्थानीय शराब की खूबियों को गिनाता हुआ हवलदार रामसिंह कहता है कि "हाँ जनाब, वह भी पहले तोड़ की। जनाब, जो मजा पहले तोड़ में है, वह दूसरी तोड़ में कहाँ। पहले तोड़ में तो इतनी गजब की चीज होती है कि मगज घुमाने के लिए स्याली का एक ही पटियाला पैग बहुत है।"[1]

जीविकोपार्जन के लिए कंजर जाति की महिलाएं शहर के समीप अपने खोखे। दुकानें) खोलने के लिए आईं तो समाज में शरीफ किस्म के लोगों द्वारा इसका विरोध किया गया। जिनका मानना था कि शरीफ घरों की बहू-बेटियों पर इस समाज के कारोबार का बुरा असर पड़ेगा। इस पर कमला बुआ मुस्कुरा कर दरोगा जी से इस सभ्य समाज की पोल खोलते हुए कहती हैं कि असल बात तो यह है दरोगा जी कि तिबारे पर आते हुए इन्हें लगता है डर कि कहीं इनकी बहू-बेटियों जिन पर ये बुरा असर पड़ने की दुहाई दे रहे हैं, देख ना लें। किसी दिन वो इन्ने रंगे हाथ पकड़ न लें। तब नहीं पड़ता है इनकी बहू-बेटियों पर असर, जब ये उनसे झूठ बोलकर कहीं और की कहकर, और पड़े रहते हैं कई-कई दिन गाजुकी में। कहो तो मैं इनमें से एकाथ को ला खड़ा करूँ आपके आगे!"[2]

- **भ्रष्टाचार :**

रेत' उपन्यास की नायिका बचनो के सरकार की भ्रष्टाचार के बारे में विचार हैं कि "असली बैरी तो अपने ही हैं। देखती ना है आए दिन गाजुकी में राय साहब, दीवान साहब, राय बहादुर और खान बहादुरों की कैसी लैन लगी रहती है। ये सब और कुछ ना हैं इन फिरंगियों के कोरे दलाल हैं। असली हूकूमत फिरंगी नहीं इनके ये बहादुर, साहब और ये दरोगा जैसे भडुए कर रहे हैं।"[3]

गाजुकी में पकड़े गए अधेड़ को छोड़ने के एवज में थाने में नेग वसूली को थानेदार इस तरह ध्यान से गिन रहा था मानो वह उसकी तनख्वा हो।

- **शोषण :**

रेत' उपन्यास कंजर जाति पर हो रहे शोषण का वर्णन करता है। कमला बुआ के पिता को पुलिस ने पकड़ लिया था। पुलिस द्वारा अब रात-बेरात बुलाने और किए जाने वाले अत्याचारों के बारे में लेखक ने अपने पात्रों द्वारा बताया है। उपन्यास में कमला बुआ की माँ की मनोदशा का लेखक ने बड़ा संवेदनशील वर्णन किया है। पति को छुड़ाने के लिए थाने जाना और वहाँ होने वाले शारीरिक शोषण से बचने के बीच वह फस सी गई है। आज 'कमला सदन' में बहू बनकर आई भाभी संतो अपने साथ हो रहे अत्याचारों के बारे में सोच रही है। जिसका वर्णन करते हुए लेखक लिखते है कि – "आज सोचती है संतो कि ताऊ ने तो धरवा लिए नकद। उसे तो मिल गया मोटा नकद नारायण। सास और ननदों को मिल गया एक चाकर परंतु खुद संतो को क्या मिला? यही की जब ननदें भोर की कुनमुनाती सुबह में अपने इज्जतदारों के साथ सपनों में कल्लोल कर रही होती हैं, उससे पहले उसकी खटर-पटर शुरू हो चुकी होती है।"[4] वहीं थाने में होने वाले शोषण के बारे में बताते हुए कमला बुआ, वैदुजी को अपनी परेशानियाँ बताती है। थाने में उनके साथ होने वाले व्यवहार से वह खिन्न है।

- **रोग :**

उपन्यास 'रेत' में कमला सदन की भाभी संतो को देख वैद्यजी को लगता है कि वह बीमार है। वह कमला बुआ को उसे पीलिया होने के शक से अवगत कराते

हैं। रुक्मिणी का काम वैश्यावृति का था। जिसके चलते उसे ‘सैक्सुएली ट्रांसमिटिड डिजीज की शिकायत हो जाती है। जिसके कारण उसे पेशाब के रास्ते में फुंसिया हो जाती हैं, और उनमें खुजली होने पर वह बंद ही नहीं होती है। इस रोग को गन्नौरिया और सिफलिस भी कहते हैं। वैद्यजी के द्वारा जब उसे इसकी जानकारी मिलती है तो वह उन्हें शरारती अंदाज में अपनी परेशानी कहती है कि वैसे एक बात कहूँ वैद्यजी, कभी-कभी यह खुजली इतनी ज्यादा होती है और इतना मजा आता है कि जी करता है.........।”[5]

- **न्याय व्यवस्ता :**

आज भी कंजर जाति अपने पारिवारिक और सामाजिक सभी मसलों को अपनी पंचायत में ही सुलझाती है। सरपंचों का न्याय उनके लिए सर्वोपरि है। कंजर जाति की न्याय व्यवस्था के अपने कुछ नियम हैं। कमला बुआ की बेटियों के बीच छिड़ा संग्राम पंचायत में जाकर खत्म होता है। जहाँ दोनों बहनों को पंचायत के कहे अनुसार अपनी धरोहर रखनी पड़ी। जिसे दोनों बहनें बड़ी सहजता से स्वीकार भी कर लेती हैं। उन दोनों बहनों को भरी पंचायत के सामने कुलदेवता की सौगंध दिलवाई जाती है कि वह अपने पंचायती फैसले को पुलिस के सामने लेकर नहीं जाएगी।

2.1.2. सांस्कृतिक जीवन –

- **त्योहार :**

उपन्यास 'रेत' में कंजर जाति के उत्सव-त्योहारों की चर्चा करते हुए लेखक आखा तीज यानी अक्षय तृतीया जो कंजर जाति का सबसे बड़ा दिन बताते हैं। जिसमें वह अपने मंगल कार्यों को पूर्ण करते हैं। पर्व और त्योहार हर वर्ष साथ नई उमंग के साथ आते हैं। वहीं, गाजुकी में भूरा पीर की मजार पर भी यही माहौल छाया हुआ था। रुक्मिणी के ड्राइवर ने उसे बताया कि यह हर वर्ष होने वाली 'उर्स 'है। पर सालाना उर्स' की यह चमक धमक के बारे में लेखक लिखते हैं कि "भूरा पीर की मज़ार पर रुक्मिणी ने इससे पहले ऐसा मेला कभी नहीं देखा। उसने पहले चबूतरे पर बनी छोटी सी मढ़ी में रखी माना गुरू और फिर माँ नलिन्या की अनगढ़ प्रतिमाओं के आगे सीस नवाया।"[6]

- **विवाह :**

कंजर जाति की व्याख्या करता उपन्यास 'रेत' उनकी सभी रस्मों, रीति-रिवाजों को बड़ी बारीकी से चित्रित करता है। यहाँ विवाह से पहले लड़की रोकने की परंपरा है। जिसमें लड़के के घर से लड़की के पिता के कहे अनुसार बयाना देना पड़ता है, और यदि लड़की का पिता अपने कहे से मुकरता है तो उसे दिए हुए बयाने से तीन गुना रकम वापस करनी पड़ती है। संतो भाभी के विवाह के बयाने

की रकम तय होने के बाद सगाई कि रस्म को पूरा किया जाता है। वहीं, विवाह की तारीख निश्चित करने के बाद कमला बुआ ने संतो और मंगल की शादी का जश्न मनाने के लिए ऐसा इंतजाम किया पूरा गाजुकी देखता रह गया। विवाह पक्का होने की खुशी में माँ सुनीता, मौसी माया समेत रुक्मिणी, वंदना, पूनम सबको बुआ ने इजाजत दे दी की वह अपने-अपने 'इज्जतदारों' को विवाह की खुशी में शामिल कर दें।

समाज में विवाह एक ऐसी परंपरा है जहाँ परिवार विशेष ही नहीं रिश्तेदार, पड़ोसी और अनेक मित्र एक साथ मिलकर समारोह मनाते नजर आते हैं। कंजर जाति में विवाह की ही तरह एक रस्म है 'मत्था ढकाई'। इस रस्म में लड़की विवाह न करके बुआ बनना चाहे तो उसे इस रस्म को पूरा करना पड़ता है। इसकी जानकारी देते हुए कमला बुआ, वैद्य जी को बताती हैं कि किस तरह जमाई कहलाने वाला व्यक्ति गाजुकी का मेहमान बन जाता है। वह ब्याहता मर्द की तरह अपनी खिलावड़ी के पास आने-जाने के लिए स्वतंत्र हो जाता है। उसके आने पर उसका पूरी तरह से सम्मान किया जाता है तथा उसकी विदाई भी नेग-दस्तूर के साथ पूरी की जाती है। इसका कारण यह था कि जब वह किसी खिलावड़ी से विवाह करता है तब वह परिवार को उनकी इच्छानुसार पैसे देता है।

2.1.3. धार्मिक जीवन :

- **अंधविश्वास :**

उपन्यास रेत की पात्रा रतना का भी यही दुःख था कि वह माँ नहीं बन पा रही थी। उसकी माँ अंगूरी ने बेटी की कामना पूरी करने के लिए बहुत कुछ किया। उसकी व्याख्या करते हुए लेखक लिखते हैं कि "कहाँ-कहाँ धक्के नहीं खाए अँगूरी ने बेटी रतना के लिए। ऐसा कौन-सा पीर-फकीर बचा होगा जिसके दर पर जाकर माँ-बेटी ने सीस ना नवाया हो। माना गुरु, माँ नलिन्या, मारी, प्रभा, भुइयाँ ही नहीं, इज्जतदारों का ऐसा कौन-सा देवी-देवता था जिसका उन्होंने व्रत-उपवास ना किया हो।"[7]

- **परंपराएं :**

रेत उपन्यास में कंजर जाति की परंपराओं का वर्णन करते हुए बच्चे होने की खुशी में पूरी जाति-बिरादरी को भोजन करवाया जाता है। लेखक उपन्यास की नायिका रतना की खुशी के बारे में बताते हैं कि अपनी खुशियों को उसने पूरी गाजुकी के साथ बाँटा। कुआँ पुजवाने के बाद वह पूरी गाजुकी को अपनी खुशी में शामिल करते हुए भोज करवाती है। बेटी के बड़े होते ही कंजर जाति में उसे अपना व्यवसाय चुनने की पूरी स्वतंत्रता है। अतः लड़की और उसकी माँ की इच्छा के विरुद्ध उससे कुछ नहीं करवाया जाता है। पिंकी के बड़े होते ही परिवार

वाले अपनी परंपरा को पूर्ण करने के लिए आपस में सलाह-मशवरा करते हैं। तब कमला बुआ अपनी परंपराओं को याद दिलाते हुए परिवार के सदस्यों को पिंकी की राय और सहमती जानने की याद दिलाती है। साथ ही, वह बताती है कि पिंकी के साथ उसकी माँ की सहमति लेना भी आवश्यक है क्योंकि बिना माँ की इजाजत वह अपना निर्णय नहीं सुना सकती है। वहीं, कंजर जाति में किसी पति द्वारा अपनी पत्नी को छोड़ने की परंपरा नहीं है। जिसका कारण कमला बुआ हरजाना बताती है। यदि कोई पति अपनी पत्नी को छोड़ना चाहता है तो उसे हरजाने के रूप में मोटी रकम चुकानी पड़ती है। जिसके कारण कंजर जाति में बहुत कम लोग ऐसा साहस कर पाते हैं।

2.1.4. स्त्री जीवन –

इतिहास गवाह है कि स्त्री ने अपनी वर्तमान स्थिति को प्राप्त करने के लिए कितने कष्ट उठाए हैं। आज का स्त्री समाज शिक्षित है, जिसके कारण स्त्रियों के अधिकारों में बदलाव आए है। आज हर स्त्री भविष्य के प्रति जागरूक है और अपनी परंपराओं का पूरा ध्यान रखते हुए आधुनिकता का सही उपयोग कर रही है।

- **पारंपरिक एवं वर्तमान समय की स्त्री :**

परंपराओं की चोट खाई संतो भाभी को देख वैद्यजी को उसकी बेटी भी वैसे ही नजर आने लगती है। वह महसूस करते है कि घर के कामों में व्यस्त पिंकी भी बिवाइयों के खाँचे से भरे पाँवों, अधढके चेहरे से झाँकती निर्निमेष जर्द आँखों और निसहाय सी दिखने लगी है। यह कंजर जाति के भाभी वर्ग की सामाजिक स्थिति है। जो परंपराओं के आधार पर कभी सुधरने वाली नहीं है। रुक्मिणी बुआ अपनी पुश्तैनी परंपरा को छोड़ राजनेता बन जाती है। पुरुष वर्ग की दैहिक भूख को अपना हथियार बनाकर रुक्मिणी बुआ ने अपने क्षेत्र की कुर्सी हासिल कर ली थी। वैद्यजी के द्वारा जब एम.एल.ए. बनने के राज को रुक्मिणी से जानना चाहा तब रुक्मिणी हँसते हुए कहती है कि – "बैदुजी, अब जाकर पता चला कि ताकत चाहे दौलत की हो या रूप और देह की, वह कितनी बड़ी होती है। अगर इनमें से एक भी आपके पास है तो समझो आपसे बड़ा ताकवर कोई नहीं है...

और अगर सारी हैं तो कहना ही क्या... मेरे पास आज तीनों ही हैं।"[8] अपनी इच्छाशक्ति, दौलत, ताकत और रूप के बल पर रुक्मिणी कंजर जाति की सामान्य बुआ से कंजर जाति की उद्धारक बन गई।

- **स्त्री जीवन का यथार्थ :**

पुलिस का रवैया अपने मतलब के लिए होता है। इसका उदाहरण गाजुकी का पुलिस स्टेशन है, जहाँ गाजुकी का हफ्ता बधा है। बाहरी रूप से समाज में कुछ भी हो पर अपने प्रयोजन के लिए खिलावड़ियों को पुलिस स्टेशन बुलाए बिना नहीं छोड़ा जाता है। कमला बुआ को अभी भी अपने माँ द्वारा कहे शब्द याद हैं। जब उसके पिता को पुलिस पकड़ कर ले गई थी। माँ हताश होकर कहती है कि "इसका मतलब है रजिस्टरी का डंडा अभी भी चलता रहेगा। अपने मरदों को हवालात से छुड़वाने के लिए जमानत के नाम पे दरोगाओं के बगल में सोना पड़ेगा?"[9] यह आज तक चला आ रहा है जब कमला बुआ नानी बन चुकी है। पुलिस की भाषा में रजिस्टरी का मतलब खिलावड़ियों (वैश्याओं) से है। अपनी आजीविका कमाने के लिए आज भी उनको पुलिस स्टेशन में अपना हफ्ता देना पड़ता है। व्यापार में हानि किसे मंजूर है? हर कोई अपने व्यापार को विकसित करना चाहता है। आज भी अपने व्यवसाय को चलाने के लिए छोटे-छोटे व्यवसायियों को इस प्रकार की चुंगी देते हुए देखा जा सकता है।

बीमार रुक्मिणी अपना धंधा बंद हो जाने के डर से अपना सहयोगी रंभा को चुनती है। रंभा को अपना सहयोगी बनाना उसका भय ही था क्योंकि यदि बांटे में बहनों को लिया तो कजले कहीं उन्हीं के ना हो जाएँ। उसका यह एकतरफा विचार सही भी था। उसका यह भय उसके व्यवसाय की यथार्थता है। माँ और नानी द्वारा पूछे जाने पर वह अपना डर जाहिर करती है। वहीं अपने भय को अपना हथियार बना कर अपनी बहनों को सजग भी करती है कि वे उसके धंधे और कज्जलों से दूर रहें। रुक्मिणी के जीवन की यथार्थता केवल उसकी ही नहीं बल्कि उसकी जैसी अनेकों लड़कियों की है जो इस व्यवसाय से अपना जीवन निर्वाह कर रही हैं। एक बड़े राजनेता के साथ काम करने वाली सावित्री बहन का चरित्र बहुमुखी है। वह तराजू के उस पलड़े की तरह है, जो ज्यादा भार की ओर ही झुकता है। अपने बारे में अपने ही पति की राय बताते हुए वह रुक्मिणी को कहती है कि "पार्टी के कामों के चलते जब मैं देर-सवेर घर आती-जाती, तो तेरे बाबू सा' मेरे उपर शक करने लगे। मैंने बहुत समझाया मगर उन्हें विश्वास नहीं होता। बाद में तो वे यह तक मानने को तैयार नहीं थे कि दोनों बच्चे उन्हीं के हैं। मेरा मन जानता है कि इस लांछन में कितनी सच्चाई है।"[10] काम के द्वारा बाहर रहने पर पति द्वारा किया जाने वाला शक सावित्री बहन की पारिवारिक सच्चाई थी। यह केवल सावित्री की सच्चाई नहीं पूरे समाज भर की है।

- **स्त्री चेतना :**

आज की नारी अपने भविष्य के लिए सचेत हो चुकी है। किस जगह किस प्रकार अपना उल्लू सीधा करना है इसका उसे भली-भाँति पता है। जिसे उपन्यास रेत की पात्रा रुक्मिणी प्रस्तुत करने में सक्षम हो पाई है। वैद्यजी को अपनी सूझ-बूझ के बारे में बताते हुए वह कहती है "मैं भी भाँप गई कि बैजी इस मुरली बाबू सा' को इसी देह से मारा जा सकता है। इसीलिए में जान- बूझकर आसमान में उड़ने वाली इन बिगड़ैल पतंगों को ढील देती गई। मैं जानती थी कि मैं जितनी ढील दूँगी, उतनी ही ये बेकाबू होंगी। मुझे पता था कि मेरी यह ढील और लापरवाही ही उसका नाश करेगी।"[11] अर्थात रुक्मिणी ने अपने देह व्यापार के कार्य को केवल अपने पेट पालने के जरिए तक नहीं रखा, बल्कि उसने आज के समाज की बारीकियों को ध्यान में रखते हुए राजनीति के काले कारखाने में अपनी नीति को चलाते हुए सरकारी हुकमरानों के लिए एक सबक छोड़ दिया।

2.2. 'काला पहाड़' उपन्यास में अभिव्यक्त :

2.2.1. सामाजिक जीवन :

- **भ्रष्ट समाज :**

समाज में फैली गंदगी को देख 'काला पहाड़ के मुख्य पात्र समेली को बहुत अफसोस होता है लेकिन वह कुछ कर भी नहीं सकता है। कारण, उसकी सुनेगा भी कौन? लेखक ने इसका जिक्र करते हुए लिखा है कि "अभी एक दिन उसके पोते असलम ने यह खबर दी थी कि वह बड़ा स्कूल जिसमें वकील साहब ने पढ़ाई की थी, उसकी छत चौमासे की बूँदा बूँदी में बैठ गई है। यही हाल यहाँ के इकलौते उस प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र का है, जिसका डॉक्टर गरीब मरीजों से खुल्लमखुल्ला सरकारी दवाओं के पैसे लेने से नहीं चूकता है, और इलाज तक की उसने बाकायदा फीस तय की हुई है।"[12]

संचार माध्यमों द्वारा हमें जहाँ देश-दुनिया की उचित अनुचित, सामाजिक-असामाजिक आदि खबरों से अवगत कराया जाता है। आज वे भी केवल सनसनी खबरों पर अपना कारोबार बढ़ाने की दौड़ में लगे हुए हैं। उपन्यास 'काला पहाड़ में संचार माध्यमों की दौड़ का इतिहास बड़े सटीक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। इस माहौल को और भी गरम करने तथा चटपटा बनाने के लिए वह ख़बरों का रुख ही बदल देते हैं। खबरों को नए-नए तरीकों से पाठकों के सामने लाना उनका धंधा सा बन गया है। भगवानदास मोरवाल ने इस बारे में

बताया है कि मेवात में आए प्रधानमंत्री और मुख्यमंत्री के आगमन की सूचना वहाँ के दैनिक अखबारों में इस प्रकार चिपकी पड़ी थी मानों कोई और समाचार ही न रह गया हो। किंतु, उसी दिन आकस्मिक मृत्यु को प्राप्त हुए सच्चे समाजसेवी वकील सहाब का शोक समाचार न था। अर्थात स्पष्ट है कि सभी इस भ्रष्ट नीतियों को अपनाने में लगे हुए हैं और समाज केवल उनके व्यापार का मैदान बनता जा रहा है। लेखक ने भ्रष्ट समाज की अनेक रणनीतियों को अपने उपन्यास में उप-कथाओं के माध्यम से दर्शाया है। लोगों को जमीन- जायदाद के लिए झूठ बोलना तो समाज की परंपरा बनती जा रही है। लेखक ने हमारी भावी पीढ़ी के झूठ और फरेब का भी काला चिट्ठा खोला है। ये अपने स्वार्थों के लिए अपने पुरखों के मान- सम्मान को भी दांव में लगा देते हैं। उपन्यास काला-पहाड़ का पात्र हरसाय जमीन हथियाने और गरीब कुम्हार को झूठा साबित करने के लिए हर संभव प्रयास करता है।

प्राकृतिक आपदाओं का आना पूर्व सूचित नहीं होता है। मेवात के एक छोटे से गाँव में अग्नि के भयंकर तांडव ने पूरे गाँव को नष्ट कर दिया। भगवान की कृपा से जन हानि नहीं हुई। किंतु, लोगों के द्वारा लाई गई लावणी (पूरे वर्ष भर शहर में मजदूरी कर कमाए पैसों से लाया गया सामान) की सामाग्री में लाया अनाज एवं अन्य सामान नष्ट हो गया। आग में जल चुके गाँव की सहायता के लिए अनेक पड़ोसी गाँवों के लोग आए। वहीं कई ऐसे थे जो बची हुई राख में घरों की हानियों

को गिन रहे थे। उनके नुकसानों को गिनकर अपना समय व्यतीत कर रहे थे। समाज में खत्म होती मनुष्यता को प्रदर्शित करता उपन्यास 'काला पहाड़' इस भ्रष्ट समाज का आइना बनकर उभरता है। भगवानदास मोरवाल ने अनेक ऐसे हादसों के जरिए भ्रष्ट समाज के अनेक उदाहरण प्रस्तुत किए हैं। वर्तमान जगत में प्राकृतिक आपदाओं के बाद हुई हानियों की वसूली करने वाले लोगों की गिनती करना मुश्किल है। ट्रेनों और घरों के दरवाजों पर डब्बा लेकर चंदा जमा करने वाले अनेक गैरकानूनी संस्थाओं के लोग इस बात के सबूत हैं।

- **गरीबी और अभाव :**

'काला पहाड़' उपन्यास में ठंड की शामों में जब बाजार अंधेरा होते-होते बंद हो जाया करती थी तब ठंड में सिकुड़े ग्रामीण अपने घरों को पैदल जाने की सोचने लगे। जिसका कारण दिया जाने वाला किराया था। जिस संबंध में लेखक बताते है कि कुछ तो ठंड में अकड़ी देह को गर्म करने के लिए पैदल निकल पड़ने को तैयार हो गए थे। अगर कहा जाए तो पैसों की कमी पैदल जाने के तर्क के लिए सही बैठती है। स्थानीय नेता चौधरी करीम हुसैन के यहाँ पढ़ा-लिखा मोहम्मद केवल इस आशा में काम कर रहा था कि कभी उसकी सरकारी नौकरी लग जाएगी। पर जब उसे सच्चाई का पता चलता है कि यहाँ केवल धोखा दिया जा रहा है तो साथी जमील को इसकी जानकारी देता है। इन सब बातों से भिज्ञ जमील यहाँ काम करने की मजबूरी के लिए तर्क देता है कि उसे अपने बच्चों के

पेट की ज्यादा चिंता है। वहीं तेज पड़ती गर्मी ने अपना कहर बरसाना शुरू कर दिया था। पानी का सूख जाना सबसे दयनीय स्थिति होती है। इस कारण गाँव के गाँव बैशाख के अंत तक खाली हो चुके थे। छोटेलाल को गाँव छोड़ जाते देख समेली द्रवित हो उठा। उसने छोटेलाल को रोकना चाहा । पर छोटेलाल ने अभाव ग्रस्त जीवन का तर्क देकर समेली को सोचने पर मजबूर कर दिया। इन सब से दुखी समेली जब मनीराम को बताता है कि छोटेलाल भी गाँव छोड़ कर चला गया। तब मनीराम उसे छोटेलाल की गरीबी और लाचारी के बारे में समझाता हुआ कहता है कि बच्चों की आवश्यकताओं के लिए गाँव से बाहर जाकर काम करना आवश्यक हो गया है। तीज-त्योहार, विवाह, समारोह आदि भी गरीब परिवार के लिए एक नई समस्या लेकर आते हैं। इस पर समेली अपने विचार व्यक्त करते हुए कहता है कि गरीब व्यक्ति के घर में विवाह जैसे उत्सव में भी गरीबी नाच दिखाती है।

- **न्याय व्यवस्ता :**

‘काला पहाड़’ उपन्यास में पंचायत न्याय व्यवस्था का वर्णन किया गया है। समेली के बेटे द्वारा जब रामचंद की बेटी के साथ दुर्व्यवहार किया गया तब पंचायत में उनकी सुनवाई हुई। पंचों द्वारा समेली को अपने फैसले से पहले जब मंजूरी पूछी गई तब समेली पंचों का आदर करते हुए उनके सम्मान में अपनी सहमती देता है। यहाँ समेली अपनी पंचायती व्यवस्था पर पूरा विश्वास करता

दिखाया गया है। उपन्यास 'काला पहाड़ की कहानी सन् 1992 में अयोध्या बनाम बाबरी मस्जिद की तोड़-फोड़ के बाद का मंजर है। मीलों दूर के इलाके मेवात में इस खौफ को साम्प्रदायिक दंगों में देखा जा सकता है। सात दिसंबर की सुबह नूह गाँव में जो लूट-पाट शुरू हो गई। दंगाईयों ने न्याय व्यवस्था को भी नंगा नाच करवा दिया। बड़े अधिकारी वर्ग इन सबके बीच अपनी जान बचाने के लिए कहीं छिप गए। रोबड़ा ने जब इन सबके बीच पुलिस की उपस्थित पर प्रश्न किया तो हुसैन दीन अपने अनुभवों के आधार पर पुलिस प्रशासन की व्यवस्था की लापरवाही के बारे में बताता है। अनपढ़ और ग्रामीण कहे जाने वाले लोगों की समझ और निर्णय लेने की सामर्थ्य से लेखक समाज को चेताना चाहते हैं।

'काला पहाड़' उपन्यास उन सच्चाइयों की पोल खोलता है जो सन् 1992 की भयंकर नरसंहार का गवाह बना था। 7 दिसंबर के दंगे के कारण पूरे मेवात में एक त्रासदी का माहौल छा गया। आठ दिसंबर को न्याय व्यवस्था का ऐसा मंजर देखने को मिला कि लोग सहमते चले गए। गाँव की सुरक्षा के लिए आए सुरक्षा कर्मचारियों के व्यवहार का वर्णन करते हुए लेखक लिखते हैं कि 'जिधर देखो बस बदहवास चेहरों को दबोचती हुई खाकी वर्दियों ही वर्दियाँ दिखाई दे रही हैं। चारों ओर गिरते- पड़ते लोग ही नजर आ रहे हैं और लोग भी कैसे सिर्फ एक ही समुदाय के। चारों तरफ से गाँव को ख़ाकी वर्दियों ने जैसे बींध दिया। इनके बीच

में जो भी भागने में या किसी तरह निकलने में कामयाब हो जाता तो ये बख़्तरबंद गाड़ियों को लेकर सरसों, गेहूँ, जौ के खेतों से बीन-बीन कर ला पटकते। जिस तरह दड़बों से भागने वाले मुर्गे मुर्गियों की गरदनें पकड-पकड़ कर बड़ी बेरहमी से दबड़े में डाल दिया जाता है।"[13] न्याय व्यवस्था का ऐसा ख़ौफनाक मंजर देख पूरा मेवात थरथरा गया।

- **भ्रष्टाचार :**

'काला पहाड़' उपन्यास में नूंह गाँव में प्रधानमंत्री के आने की खुशी में यातायात के नियमों को सुचारू रूप से चलाने के लिए पुलिस द्वार रात-दिन एक कर दिया गया था। स्थानीय तीन पहियों पर खड़ा किया गया एक वाहन जो शायद वाहनों की श्रेणी में भी नहीं आता था। जिसका नाम लक्कड़बुग्गा अर्थात जुगाड़ रखा गया था। वह भ्रष्ट पुलिस की चपेट में आ गया। उस वाहन चालक से भी पचास रुपए की गैर-कानूनी जमानत पर रिहा कर दिया गया। आज कल आए दिन इस प्रकार की घटनाएँ होती रहती हैं जिसमें मन माना कर वसूल कर जनता को परेशान किया जाता है। इस स्थिति में जनता को चाहिए कि वह कानून न तोड़े। जिससे वसूली का यह कारोबार स्वंय ही नष्ट हो जाए। लेखक ने पुलिस थाने में हो रहे भ्रष्टाचार के बारे में लिखा है "लक्कड़बुग्गा यानी जुगाड़ को बाइज्जत रिहा करने के बाद थानेदार ने सिपाही को पहले खूब डाँटा कि भविष्य में इन लक्कड़बुग्गों को कुछ न कहा जाए लेकिन साथ ही उसके कंधे को हलके हलके

सहलाते हुए यह भी सलाह दे डाली कि मौक़ा बेमौक़ा इन्हें छोड़ा भी नहीं जाए। अच्छा हो यदि इनसे भी महिना बाँध लिया जाए।"[14] वृद्धों के लिए आने वाली पेंशन में भी हमारे सरकारी हुकमरान अपना हिस्सा लेना नहीं छोड़ते हैं। प्रधानमंत्री के आने की खुशी में वृद्ध अपनी समस्या उनके सामने रखते हुए कहना चाह रहे हैं कि "प्रधानमंत्री जी के कानों तक यह बात पहुँचानी है कि उनकी पेंशन की रकम बढ़ाई जाए क्योंकि इस समय मिलने वाली पेंशन की रकम इतनी कम है कि पोस्टमैन और पोस्टमास्टर को उनका हिस्सा देने के बाद, उन्हें जो रकम मिलती है उससे गुजारा करना बेहद मुश्किल है।"[15]

शिक्षित आस मोहमद, स्थानीय नेता के घर पर सरकारी नौकरी की चाह में नौकरों का जीवन जीने के लिए मजबूर है। उसे वहाँ रहते नेताजी के भ्रष्टाचार का पता चलता है। नेता जी पटवारी की नौकरी के लिए घूस माँगता हुआ पटवारी के पद में होने वाली कमाई के बारे में बड़े गर्व से बताता है। कमाइयों के उदाहरण देते हुए वह नौकरी के लिए मनमानी घूस वसूल करता है। पूरा नगीना आग की चपेट में आ गया और गाँव में कुछ भी नहीं बचा। सरकार की तरफ से मुआएना करने आए लोगों के बारे में लेखक लिखते हैं कि "खंड विकास अधिकारी और तहसीलदार ने तो अपनी सूची तैयार करते समय बेहदसंयम और शिष्टता से काम लिया, किंतु पटवारी और गिरदावर की गिद्ध दृष्टि सूची तैयार करते समय एक-एक वस्तु के बारे में इस तरह खोजबीन करने लगी कि कभी-कभी तो अपने जले

हुए घरों को देखकर आहत लोग तिलमिला कर रह जाते। शायद यह रुतबे का ही फ़र्क़ है कि बड़ा अधिकारी संयम से काम लेता है। छोटा अधिकारी तड़पते हुए जिस्म से भी कुछ न कुछ हासिल करने की फ़िराक़ में रहता है।"[16]

- **ग्रामीण चेतना :**

  'काला पहाड़' उपन्यास में नूह गाँव में प्रधानमंत्री जी के सामने मेवात के विकास के प्रस्ताव रखे गए, वहीं वृद्ध अपनी पेंशन की बात रखने वाले थे। इस बात पर समेली क्षेत्र के अन्य लोगों को असंतोष करने से मना करता है। वह सब को समझाता है कि हमारी पेंशन से ज्यादा तो क्षेत्र का विकास आवश्यक है जो प्रधानमंत्री तक पहुँच चुकी है। आज का युवा ही नहीं हमारा असहाय वृद्ध वर्ग भी जागरुक हो गया है। उसे भी अपने और समाज के विकास की चिंता सताती है। लेखक ने समेली के माध्यम से ऐसे अनेक तरह के उदाहरण प्रस्तुत किए हैं। समेली को गाँव में होने वाले विकास से ज्यादा खुशी मिलती है। 'काला पहाड़' उपन्यास में समेली एक ऐसा पात्र है जिसके द्वारा लेखक ने प्रगतिशील विचारों को दर्शाया है।

वहीं, जब बनवारी गाँव छोड़कर जाने वाला था, मनीराम उसे न जाने के लिए अनेक तर्क- कुतर्क देता है। अपनी युवा सोच को मुखरित करता हुआ वह अपने पिता को कारोबार और रोजगार के बारे में प्रश्न करता है कि गाँव में रहकर क्या करे जिससे वह अपने बच्चों का पेट पाल सके । स्थानीय नेता करीम हुसैन के

भाषण को सभी बड़े ध्यानपूर्वक सुन रहे थे। उसके द्वारा मेवात को खुशहाल कहे जाने पर समेली को बहुत गुस्सा आया और वह राजनेता के भाषण का प्रतिरोध करते हुए मनीराम को कहता है कि “मेरा मुँ में गाली खाए... कौन-सी खुसाली है मेवात में....अरे, छोटी- मोटी जात सू लेके थोड़ी-बहोत जमीन वालामेव तो खाण-कमाण कू गाँवन्ने छोड़ के जा रा हैं और ई कह रो है इलाका खुसहाल है........।”[17]

2.2.2. सांस्कृतिक जीवन –

- **लोककथाएं :**

उपन्यास 'काला पहाड़' में बूढ़ा समेली अपने बूढ़े बाप द्वारा सुनाई गई कथाएँ आज भी याद करता है। उसे एक लोककथा आज भी याद है जिसमें थिनगढ़ में जदुवंशी राजा थिनपाल की दो संतानों में लखनपाल की दो संतानों (साँमरपाल और शोपरपाल) में से साँमरपाल की बहादुरी से बादशाह फिरोजशाह बहुत प्रसन्न हुए। बादशाह ने उनका नाम नाहर खाँ रख दिया। बादशाह के सम्मान में शोपरपाल ने अपना धर्म परिवर्तित कर दिया। अपना धर्म परिवर्तन कर मुस्लिम धर्म ग्रहण करना अपने आप में बड़ा निर्णय है। लोकथाओं की मान्यताएँ आज भी दो धर्मों के प्रति आपसी सदव्यवहार की सूचक हैं। मेवात में 'पंडून को कड़ा' नामक महाकाव्य की रचना हुई है। इस कथा को बड़ी पारंपरिक तरीके से गाया जाता है। इस महाकाव्य के पीछे एक बड़ा किस्सा मशहूर है *कहा जाता है कि सादल्ला के गाँव आकेड़ा के एक मेव चौधरी साँवला द्वारा कुआँ खुदवाने का कार्य शुरू किया गया। खुदाई के दौरान उसमें कुछ ताँबे के पत्तर मिले, जिन पर कुछ लिखा हुआ था। साँवला मेव ने ये पत्तर सादल्ला को सौंप दिए। सादल्ला ने इन पत्तरों का अध्ययन किया और पाया कि इन पत्तरों में पांडवों का जीवन परिचय लिखा हुआ है। इस आधार पर सादल्ला ने 'पंडून को कड़ा' की रचना प्रारंभ की, जिसे उसने 1695 में पूरा किया।"[18]

- **लोकगीत :**

उपन्यास ‘काला पहाड़ मेवाती तहजीब के अनुसार समेली के ससुराल से आए लोगों के द्वारा छोरा रुकाई की रस्म पूरी की जाती है। रस्म पूरी होते ही घर में आई औरतें बन्ने और समधी समधन गाना शुरू कर देती हैं।

“बनड़ा खड़ो सड़क पे अनार माँगे री

अपनी माँ सू रुपिया हजार माँगे री

अपने बाबा सू रुपियाहजार माँगे री

अपनी भावज सू सारो सिंगार माँगे री

बनड़ा खड़ो सड़क पे....”[19]

गंगा-जमुना तहजीब में रचा-बसा मेवाती समाज बनवारे की रस्म को भी बड़े चाव से पूरा करता है। समेली का बनवारा महताब के घर से होता है। वापस समेली के घर पहुँचाने गया औरतों का हुजुम गाते हुए जाता है कि –

“धौले-धौले चावल, उजलो है भात

उजली बतीसी बनवारो नोतो

मैं लोहे बूझें मेरे सुघड़ बनड़ा, मेरे चतर बनड़ा

तेरे बनवारो री किन्ने नोतो

दादा मेरो राजा, दादी रानी होए

मेरो बनवारो री. उन्ने नोतो ”[20]

यह लोकगीत रातभर एक के बाद एक चलते ही रहते हैं। वहीं चाक पूजने गई स्त्रियाँ कुम्हार के घर पर ऐसे गीत उठाती हैं कि पूरा माहौल गीतमय हो जाता है।

“चौबारा पे मसीन चलावे दरजी को

या कुर्ती ए अपणा जेठ तू दिखाऊँगी

वही तो देवेगो याको दाम

चौबारा पे मसीन चलावे दरजी को....

जेठ भला ने घोड़ी बख्सी

ना लूँरी ना लूँ करे दरजी को

चौबारा पे मसीन चलावे दरजी को......”[21]

अपनी खुसियों और मनौतियों के पूरा होते ही अपने भगवान को बधाई देना सामाजिक परम्पराओं का हिस्सा है। मनीराम को पुत्र रत्न की प्राप्ति होती है।

अपने भगवान को धन्यवाद करने के लिए वह दादाखानू की मजार पर गलेप चढ़ाता है। गलेप चढ़ाने निकला औरतों का हुजूम लोकगीतों को गाता हुआ दादाखानू की मजार की ओर निकल पड़ता है।

"पपलिया झकझाल री

जहाँ सय्यद को थान

अम्माँ तेरी ढो रई ब्यार

घेर लई सब गवड़ी

घेरो मोहन ग्वाल

सय्यद सोई साँझ के

कौन जगावन जाए?

औधे तो धरे बिलोवणा

फिर-फिर जाएँ छछियार

सय्यद बड़े औलिया......."[22]

- **त्योहार :**

उपन्यास ‘काला पहाड़ में बूढ़े समेली को अपनी युवा अवस्था में मनाए गए त्योहार याद आते हैं। सावन के महिने में मनाए जाने वाले तीज के त्योहार के समय होने वाली पतंगबाजी उसके मन में अभी भी जीवंत है। अपने समय की पतंगबाजी के बारे में वह सोचता है कि “वह कैसे भूल है तीज पर कूड़ ऊपर जमा उस भीड़ को जिसकी आँखें पच्छिम कि ओर दूर आकाश में गोता लगाती उस पतंग पर टिकी होती है, जिसकी डोर मँगतू की खून से सनी अँगुलियों के पोरों को ज़िबह करती हुई, पूरी गति के साथ दूसरी पतंग की डोर को रेत रही होती।”[23]

2.2.3. धार्मिक जीवन –

- **धार्मिक शिक्षा :**

‘काला पहाड़’ उपन्यास मेवात क्षेत्र की राजनीतिक, सामाजिक एवं भौगोलिक स्थिति का विवरण है। स्थानीय नेता चौधरी करीम हुसैन से उसके समाज के कुछ धार्मिक व्यक्ति मिलने आते हैं । वह उसका ध्यान मदरसा शिक्षा की ओर आकर्षित करते हैं। वह उससे इलाके में मुस्लिम धर्म से भटके लोगों में सुधार लाने के लिए कुरान के तालीम की व्यवस्था करने की गुजारिश करते हैं। वहीं, seबाबूखाँ भी अपने पिता को इस्लामी शिक्षा और मदरसों को खोलने के लिए चंदा माँगता है। उसी क्षेत्र के शिक्षक डॉ उस्मानी अपने ही कॉलेज के दूसरे प्रोफेसर शफी साहब को अपनी मेवाती शिक्षा नीति के बारे में बताते हैं कि यहाँ बालिकाओं को दीनी तालीम से ज्यादा पढ़ने का अधिकार नहीं है। उसका उदाहरण स्वयं स्थानीय कॉलेज था जहाँ मुस्लिम बालिकाओं का प्रतिशत ना के बराबर था। किंतु, मेवात कॉलेज खुलते ही कस्बे में रौनक आ गई। कहीं न कहीं सबके मन में शिक्षा के प्रति लगाव ही था जो एक उत्सव रूप में सामने आया।

- **जातीय संकीर्णता :**

'काला पहाड़' उपन्यास में दादाखानू की मजार पर हरे-भरे कीकर के पेड़ को बाबूखाँ द्वारा काट दिया जाता है। इस पर उसका पिता समेली उसे डॉटता है, तब वह अपने पिता कि बात का विरोध करते हुए कीकर दादाखानू की मजार के पास होने का कारण देता है। अर्थात मजार के पास का पेड़ भी मुस्लिम जाति का बना देता है। समेली सोचते ही रह गया कि ऐसी जातीय भेद-भाव का गाँव में कब बीजारोपण हुआ? इसी का फायदा स्थानीय नेता और महाजन उठाते हैं। जिसके बारे में प्रो. उस्मानी अपने साथ के डॉ. शफीकुर्रहमान को बड़े मजे से बताते हैं कि जनता जाति के टंटे में इस तरह घिरी है कि जैसे ही उन्हें पता चलता है कि उम्मीदवार उनके गोत्र और बिरादरी का है तो वह बिना सोचे-समझे अपना वोट उसे डाल आते हैं। भूख से लड़ते हुए ग्रामीण जाति-पाति की चादर को बड़ी इज्जत से सहेजकर रखते हैं। अपनी जाति-बिरादरी का वर्चस्व बरकरार रखने के लिए ये लोग कुछ भी करने को तैयार रहते हैं। परम्पराओं को निभाने के साथ खान-पान, छुआ-छूत आदि का भी पूरा ख्याल रखा जाता है। भूरे खाँ अपने बेटे समेली की शादी के समय जब हिंदू परिवारों को खाने का न्यौता देता है और उन्हें निश्चिंत करवा देता है कि हिंदू धर्मानुसार उनके खाने-पीने की व्यवस्था कर दी है। जहाँ खाने बनाने की सभी सामग्री के साथ भट्टी तक खुदवा दी गई है।

धीरे-धीरे जातियों में आई संकीर्णता आपसी मेल-मिलाप की रीतियों में भी बँटवारा कर देती है। रस्मों-रिवाजों में आए परिवर्तन के बारे में बाबू खाँ स्पष्ट रूप

से अपने को सच्चे मुसलमान की उपाधि देते हुए चाक पूजने की रस्म को नहीं मनाता है। उसका मानना था कि यह सब हिंदू धर्म में होने वाले चोचले हैं। विवाह समारोहों में अचानक कुछ नए चलनों का आना सबको आश्चर्यचकित कर देता है।

- **परंपराएं :**

मेवात परंपराओं का धनी कस्बा है। विवाह हो या कोई और महोत्सव 'चाक पूजने' की परंपरा वर्षों से चली आ रही है। पात्र समेली अपने निकाह के दिनों को याद करते हुए चाक पूजने की इस रश्म के बारे में सोचता है कि "सबसे आगे चल रही सल्ला नाई की घरवाली ने नाज, गुड़, सरसों, का तेल और चावल से भरे खरोले को सिर से उतार कर चाक के पास रख दिया। उधर गुलकंदी बड़ी-बूढ़ियों के साथ मिलकर चाक पूजने की रस्म पूरी करती रही और इधर औरतों के समूह से गीतों के स्वर फूटते रहे।"[24] ठीक उसी शाम को 'भातई नामक दूसरी रस्म मनाने की परंपरा है। कुम्हारनी जो चाक पूजने की रस्म को पूरा करती है, वहीं भाताई की रस्म में प्रमुख भूमिका निभाती है। दूल्हे के नैनीहाल से मामा को इस रस्म के लिए बुलाया जाता है। जो अपनी बहन के परिवार के साथ-साथ कुम्हारनी को नेग देकर पूरा करता है। जिसकी व्याख्या करते हुए लेखक लिखते हैं 'समेली की माँ के भाई-भतीजों ने अपनी हैसियत से बढ़ कर भात दिया। समेली के लिए कपड़े लत्ते तो उन्होंने दिए ही बल्कि मान में भूरे खाँ, समेली की

माँ के लिए तीनों लत्ते, दोनों फूफियों के लिए एक-एक लूगड़ा और तीनों बहनों के लिए दो-दो रुपए भी दिए। समेली के लिए पाँचों कपड़े यानी तहमद, कुर्ता, साफी, बनियान और जुर्राब के अलावा कुरम की जूतियाँ और अन्य जरूरत का सामान भी दिया। इसके अलावा सक्का, नाई, फकीर, कुम्हार, चूहड़ा सबका नेग बड़े चाव से दिया बरकत ने।"[25]

2.2.4. स्त्री जीवन –

मेवात के छोटे से गाँव नगीना में सभी महिलाएँ चाहे मेव (मुसलमान) हो या हिंदू अपने रीति-रिवाज, उत्सव-त्योहार, विवाह आदि में सम्मिलित होकर बड़े आनंद पूर्ण तरीके से मनाते हैं। गाँवों में इन्हीं मेलों-उत्सवों के दौरान साम्प्रदायिक सदभावना बनाए रखने में स्त्रियों का महत्वपूर्ण योगदान होता है।

- **पारंपरिक एवं वर्तमान समय की स्त्री :**

शादी हो या कुछ और उत्सव मेव स्त्रियाँ चाक-पूजन जैसी रश्म को बड़े उत्साह से मनाती हैं। काका समेली को अभी भी अपनी शादी में अपनी माँ, बड़ी बहन और बुआ द्वारा की गई चाक पूजन की रश्म याद है कि किस प्रकार पूरे गाँव की औरतों के साथ बड़े आनंद पूर्वक संपन्न हुई थी। वहीं, काका समेली के पुत्र बाबू ने खुद को नए विचारों का मुसलमान बताते हुए चाक पूजने की हिंदू रश्म मनाने से इनकार कर दिया। इन परंपराओं को सहेजे रखने के लिए तरकीला, रामदई को पूरा विश्वास दिलाते हुए कहती है 'इन मरदन् की बात को कहा भरोसे...तू तो बेमतलब घबरा री है....रंडी, ई तरकीला अपना कौल की बहोत पक्की है.... मैं देखूँगी के कैसे ना पुजेगो चाक।"[26]

- **स्त्री जीवन का यथार्थ :**

स्वयं स्त्री ही स्त्री के दुःख को नहीं समझती और उसे प्रताड़ित किए बिना नहीं छोड़ती है। औरत की अस्मिता पर औरतों द्वारा सवाल उठाए जाते हैं। तरकीला को अकेली पाकर उनकी सहेलियों द्वारा उसकी निजी जिंदगी पर सवाल किए गए। वे उसे उल्लाहना देते हुए उसके चरित्र पर दाग तक लगा देते हैं। तरकीला के संबंध में रोबड़ा की बहू कहती है-"अरी, मरद तो बस में करणों बीरबाणी के हाथ में होवे है... बहाण, मैं तो ई जाणू हूँ के मरद जभी घर सू बहार मुँ मारेगो, जब वाको अपना घर में पेट ना भरेगा.....।"[27]

- **विवाहित जीवन की विडम्बनाएं :**

विवाह के बाद बच्चा न हो पाना स्त्री के लिए दुःख का विषय होता है। उसकी भावनाओं को न समझते हुए पूरा परिवार इसके लिए भी केवल औरत को ही कसूरवार मानता है जो स्त्री के लिए और भी असहनीय हो जाता है। अशिक्षा के कारण गाँव-घरों में बच्चा ना होना नारी जाति का सबसे बड़ा गुनाह समझा जाता है। सास-ससुर के ताने, आस-पड़ोस की बातें स्त्री के जीवन को झकझोर कर रख देती हैं। तरकीला को उसी की सहेली उलाहने देते हुए बच्चा न होने पर ताने कसती हैं। त्तरकीला अपने पति के चारित्रिक दोषों के चलते पहले से ही परेशान थी और रही-सही कसर उसकी हमजोली साथियों ने निकाल दी। इस प्रताड़ना को सहती तरकीला अपने पति से कह उठती है- "ढेड, अब तुई या घर में नंगो नाचतो डोलियो....मैं भी काई कुआ-पोखर में गिर-गिरा के या रात- दिन का

जलन सू पीछो लूँगा.... मैंने तो या घर में काई को सुख देखोई ना है.... एक ई खसम है याने भी छाती फूँक राखी है......।"[28] कैसी हैं ये विडबनाएँ जो पति द्वारा किए गए कुकृतियों पर भी समाज पत्नी को ही दोषारोपित करता है। विवाह उपरांत बच्चा ना हो पाने की वजह से कई औरतों का जीवन नरक बन जाता है और बहुत से परिवारों में इसके चलते पति दूसरी शादी कर लेता है। जिसके चलते पहली विवाहिता का जीवन जिंदा लाश बनकर रह जाता है।

- **स्त्री चेतना :**

दादा-दादी के लिए बच्चों की अहम भूमिका होती है। वे अपनी पीढ़ी के विस्तार को लेकर बहुत संवेदनशील रहते हैं। 'काला पहाड़' में मनीराम की बीबी का नसबंदी कराना एक बड़े साहस का काम था। जिसकी वजह से घर में बवाल मच गया। वंश को बढ़ाने का जो जिम्मा बहू को दिया गया था उसे तोड़कर रूमाली की बहू आगे निकल गई। वह समझ चुकी थी कि आज के महँगाई के माहौल में बच्चों का सीमित होना बहुत आवश्यक है। वह अपनी सास को यह बताते हुए कहती है- *अम्मा जी, अब तो तुम छोटका लालाजी के बालकों के गलेप चढ़ाने की तैयारी करो..... हमारी ओड़ सू तो आखरी गलेप है......।"[29]

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1. मोरवाल भगवानदास, रेत, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, पहला संस्करण 2008, पृ. 47
2. वही, पृ. 143
3. वही, पृ. 52 – 53
4. वही, पृ. 74
5. वही, पृ. 97
6. वही, पृ. 314
7. वही, पृ. 66
8. वही, पृ. 323
9. वही, पृ. 41
10. वही, पृ. 200
11. वही, पृ. 216
12. मोरवाल भगवानदास, काला पहाड़, राधाकृष्ण प्रकाशन 1999, पहला संस्करण 2004, पृ. 29
13. वही, पृ. 435
14. वही, पृ. 10
15. वही, पृ. 11
16. वही, पृ. 204
17. वही, पृ. 86

18. वही, पृ. 132

19. वही, पृ. 107

20. वही, पृ. 112

21. वही, पृ. 118

22. वही, पृ. 56 – 57

23. वही, पृ. 32

24. वही, पृ. 118

25. वही, पृ. 120 – 121

26. वही, पृ. 358

27. वही, पृ. 67

28. वही, पृ. 216

29. वही, पृ. 264

तृतीय अध्याय : 'रेत' और 'काला पहाड़' उपन्यासों का विश्लेषण और तुलनात्मक अध्ययन

3.1. 'रेत' उपन्यास का विश्लेषण

राजकमल से प्रकाशित इस उपन्यास में कहानी है कंजरों की – एक ऐसी घुमंतू जाति जो समूचे दक्षिण-पश्चिमी एशिया में कमोबेश फैली हुई है। कहानी घूमती है कमला सदन नाम के एक मकान के इर्द-गिर्द, जो परिवार की मुखिया कमला बुआ के नाम पर रखा गया है और जहां रुक्मिणी, संतो, पिंकी आदि तमाम महिलाओं का जमघट है। ये सभी पारंपरिक यौनकर्मी हैं और जिस कंजर समाज से वे आती हैं, वहां इस पेशे को लंबे समय से मान्यता मिली हुई है। समूचे परिदृश्य में सिर्फ एक पुरुष पात्र है जिसे सभी बैदजी कह कर पुकारते हैं। यह पात्र वैसे तो दूसरी जाति का है, लेकिन घर-परिवार के मामलों में इसे सलाहकार और हितैषी की भूमिका में दिखाया गया है। यहीं से शुरू होती है स्त्री विमर्श के निम्नवर्गीय प्रसंगों की दास्तान – जहां स्त्री की देह को पुरुष समाज के खिलाफ लेखक ने एक औजार और हथियार के रूप में स्थापित किया हैं।

उपन्यास का नामकरण रेत सार्थक है। रेत का अर्थ है-जिसकी कोई पकड नहीं है। रेत की स्थिति विस्थापन जैसी होती है। रेत को हवा में उड़ाया जा सकता है। रेत में उत्पन्न कराने की उर्जा नहीं होती। रेत प्रतीक है उस आदिवासी समाज की जो इस उपन्यास के केन्द्र में स्थिति है। उपन्यासकार लिखते हैं-"रुक्मिणी तो ऐसी रेत

है जिसे जेसी चाहे हवा उडा ले जाए। जैसा चाहे पानी बहा ले जाए और तो और जिसके जी में आए अपनी मुठ्ठी में कैद कर ले जाए। क्या है इसका अपना कुछ भी तो नहीं है। भला रेत का भी अपना कोई वजूद होता है।"[1]

भगवानदास मोरवाल का रेत उपन्यास आदिवासी जनजीवन विशेषकर आदिवासी स्त्रियों को दुखद स्थिति का जीवंत दस्तावेज है। इन स्वियों की निर्यात यही है कि इन्हें विवश होकर देह व्यापार करना पड़ता है। रुक्मिणी का संपर्क मुरली भाई से होता है और वह सावित्री मल्होत्रा की प्रेरणा से राजनीति में प्रवेश करती है तथा राजनीति में सर्वोच्च्च मंत्रीपद तक पहुँचती है। इससे स्पष्ट होता है कि यदि स्त्री दढ प्रतिज्ञा करें, अपनी महत्वाकांक्षाओं को अंजाम देने का साहस करें, तो वह स्वियों के लिए वंचित और उपेक्षित रहे राजनीति जसे क्षेत्रों की उंचाईयों तक पहुंच सकती है।

गाजूकी और कमला सदन के बहाने यह कथा ऐसे दुर्दम्य समाज की कथा है जिसमें एक तरफ़ कमला बुआ, सुशीला, माया, रुक्मिनी, वंदना, पूनम हैं; तो दूसरी तरफ़ हैं संतो और अनिता भाभी। 'बुआ' यानी कथित सभ्य समाज के बर-अक्स पूरे परिवार की सर्वेसर्वा, या कहिए पितृसत्तात्मक व्यवस्था में चुपके से सेंध लगाते मातृसत्तात्मक वर्चस्व का पर्याय और 'गंगा नहाने' का सुपात्र। जबकि 'भाभी' होने का मतलब है घरों की चारदीवारी में घुटने को विवश एक दोयम दर्जे का सदस्य। एक ऐसा सदस्य जो परिवार का होते हुए भी उसका नहीं है।

रेत भारतीय समाज के उन अनकहे, अनसुलझे अंतर्विरोधों व वटों की कथा है, जो घनश्याम 'कृष्ण' उर्फ़ वैद्यजी की 'कुत्ते फेल' साइकिल के करियर पर बैठ गाजूकी नदी के बीहड़ों से होते हुए आगे बढ़ती है। यह सफलताओं के शिखर पर विराजती रुक्मिणी कंजर का ऐसा लोमहर्षक आख्यान है जो अभी तक इतिहास के पन्नों में रेत से अटा हुआ था। जरायम-पेशा और कथित सभ्य समाज के मध्य गड़ी यौन-शुचिताओं का अतिक्रमण करता, अपनी गहरी तरल संलग्नता, सूक्ष्म संवेदनात्मक रचना-कौशल तथा ग़ज़ब की क़िस्सागोई से लबरेज़ लेखक का यह नया शाहकार, हिन्दी में स्त्री-विमर्श के चौखटों व हदों को तोड़ता हुआ इस विमर्श के एक नये अध्याय की शुरुआत करता है। इस उपन्यास को २००९ में यू के कथा सम्मान द्वारा सम्मानित किया गया है।

'रेत' ऐसे दुर्दम्य समाज की कथा है जिसकी परम्पराओं पर हम सहजता से विश्वास नहीं कर सकते। यह उपन्यास कंजर जनजाति की आस्था, धार्मिक विश्वास, समाज, संस्कृति का आईना है। उपन्यास 'रेत' के केन्द्र में कमला सदन है जहाँ एक ही घर की चौहद्दी में एक साथ दो अन्तर्विरोधी परम्पराएँ आमने-सामने टकरा रही हैं। खेलावड़ी (वेश्यावृत्ति) के पेशे के साथ कमला बुआ, सुशीला, माया, रुकमणि, वंदना और पूनम एक ही घर में संतो और अनीता भाभी, यानी विधिवत् विवाह के बाद भाभी कही जानेवाली पतिव्रताओं के साथ रहती हैं। कमला बुआ उपन्यास में मातृसत्तात्मक वर्चस्व की प्रतीक है और 'भाभी' ब्याहता होते हुए भी

बाहर से लाई गई दोयम दर्जे की सदस्या| मोरवाल का यह उपन्यास अद्भुत किस्सागोई के साथ ही हिन्दी में नरविमर्श का सूत्रपात करता है। प्रकाशन के बाद से ही विवादों के केन्द्र में रहे 'रेत' उपन्यास में कंजर जनजाति (काननचर जनजाति) के लोक विश्वासों, प्रथाओं, जीवन-शैली और परम्पराओं का सटीक और दिलचस्पप विवरण है। जरायम पेशा और कथित सभ्य समाज के मध्य गड़ी यौन-शुचिताओं का अतिक्रमण करता यह उपन्यास आज भी अपनी विलक्षण छवि बनाए हुए है।

'रेत" उपन्यास की कथा राजस्थान के एक गाँव के चारों ओर बिखरी रेत के माध्यम से समाज के विभिन्न वर्गों की जीवनी को चित्रित करती है। इस उपन्यास में भगवानदास मोरवाल ने गाँव के सांस्कृतिक, राजनीतिक और आर्थिक परिदृश्यों को अत्यंत विस्तार से विवरण किया है। उन्होंने समाज में जाति, व्यवस्था और व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं को परिदृश्य के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

रेत" उपन्यास में व्यक्त किए गए समाजिक संदेश और मानवीय अर्थों को समझने के लिए विशेष ध्यान दिया जाता है। इसका विश्लेषण उन संदेशों के विवेचन पर केंद्रित हो सकता है जो कवि ने अपनी कहानी के माध्यम से समाज को सूचित करने के लिए प्रस्तुत किए हैं। इसमें समाज की विभिन्न वर्गों के बीच विरोध और समानता के मुद्दे, गाँव की जीवनशैली और विकास, और व्यक्तित्व के माध्यम से समाज की प्रतिक्रिया आदि शामिल हो सकते हैं।

उपन्यास की कथा में कई पात्र हैं जो अपने आत्मिक संघर्षों, सपनों, और उम्मीदों के साथ जूझते हैं। उनकी अटल संघर्ष और उनके समाज में अपने स्थान के लिए लड़ाई को उपन्यास के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है।

प्रस्तुत उपन्यास से यही सिध्द होता है कि आदिवासी कंजरों के जीवन में सुधार लाना हो तो उन्हें जाग्रत. संगठित करना पड़ेगा। अन्यथा यह समाज मुख्य धारा से पूर्णतया कट जायेगा। जैसे किरण सक्सेना लिखती है- रंत उपन्यास में अभावग्रस्त पिछडे, असभ्य, अशिक्षित कही जानेवाली ये जनजातियाँ जयराम पेशा जिन्दगी से हटकर जाग्रत और संगठित होने के लिए छटपटा रही है। इनके आंदोलन नक्सलवाद की हिंसा की तरु न बढे इसलिए इन्हें सभ्य समाज, सरकार, प्रशासक, समाजसेवी सभी के सामूहिक प्रयास से मुख्यधारा में लाना होगा। यही आज की माँग हैं।

- **सामाजिक असमानता और जातिगत भेदभाव:**

  भगवानदास मोरवाल अक्सर व्यापक जाति व्यवस्था और व्यक्तियों के जीवन पर इसके प्रभाव पर चर्चा करते हैं। वह चित्रित करते हैं कि जाति-आधारित भेदभाव सामाजिक संबंधों, संसाधनों तक पहुंच और अवसरों को कैसे प्रभावित करता है।

  इसका उदाहरण यह है की जब रुक्मिणी चुनाव लडने के लिए अपना नाम भारती करती है तब अनेक लोग उसका विरोध करते है यह कहकर की वह

एक खिलवाड़ी है और वह पढ़ी लिखी भी नही हैं। उनका कोई अस्तित्व नहीं है और वह एक निचले जात से अति है।

- **ग्रामीण गरीबी और आर्थिक कठिनाई:**

उपन्यास गरीबी और आर्थिक चुनौतियों का सामना करने वाले ग्रामीण समुदायों के संघर्ष पर प्रकाश डालता है। मोरवाल कठिन परिस्थितियों में जीवित रहने के लिए प्रयास कर रहे किसानों, मजदूरों और हाशिए पर रहने वाले समूहों की कठोर वास्तविकताओं को दर्शाते हैं।

शोषण और आर्थिक समस्या के कारण कंजर जाति की महिलाओं को खिलवाडी बनना पड़ता है। इसके बारे में कमला बुआ कहती है की जब बचपन में उनके पिता और घर के बड़े मर्दों को पुलिस पकड़कर ले जाती थी, तब उन्हे छुड़ाने के लिए उन्हें अपने आप को उन पुलिस वालो को बेचना पड़ता था तभी वह उनके परिवार वालो को छोड़ते थे।

- **शोषण और अन्याय:**

मोरवाल की कहानी ग्रामीण परिवेश में प्रचलित विभिन्न प्रकार के शोषण और अन्याय को उजागर करती है, जैसे जमींदारों, साहूकारों और भ्रष्ट अधिकारियों द्वारा शोषण। उन्होंने इस बात पर प्रकाश डाला कि कैसे शक्ति असंतुलन प्रणालीगत उत्पीड़न में योगदान देता हैं।

उपन्यास में संतो भाभी का बहुत शोषण होता हुआ दिखाई देता है। संतो शादी के बाद से ही शोषित होती आ रही है। उसका पति दिन भर शराब के नशे में दूत रहता है जिसके कारण उसके अपने घर में उसको कोई सम्मान नहीं दिया जाता। वह बस घर और अपने ननंदो के काम करने में ही रह जाती है।

- **पर्यावरणीय क्षरण:**

ग्रामीण आजीविका पर पर्यावरणीय क्षरण का प्रभाव "रेत" में खोजा गया एक अन्य विषय है। भगवानदास मोरवाल दर्शाते हैं कि वनों की कटाई, सूखा और पारिस्थितिक परिवर्तन जैसे कारक कृषि और प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर समुदायों को कैसे प्रभावित करते हैं।

- **महिलाओं के मुद्दे:**

भगवानदास मोरवाल ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं के सामने आने वाली चुनौतियों पर चर्चा करते हैं, जिनमें शिक्षा तक सीमित पहुंच, प्रतिबंधित स्वायत्तता और सामाजिक अपेक्षाएं शामिल हैं। वह सामाजिक मानदंडों और पितृसत्ता के बीच महिलाओं के लचीलेपन को चित्रित करता है।

उपन्यास में अनेक महिलाओं के मुद्दों को उजागर किया है। इस उपन्यास की जो मुख्य पत्र है रुक्मिणी उसको एक बीमारी है जिसपर इलाज करने के लिए वह डरती है यह सोच कर की कही उसकी बीमारी के बारे में लोगो को पता

न चल जाए जिससे उसका धंधा बंद हो सकता है । पिंकी जो संतो और कमला सदन की सबसे छोटी लड़की है वह अपने पिता के उमर के मुरली बाबू के साथ निजी संबंध बनाने से नहीं कतराती। रंभा अपनी मां के खिलाफ जाकर अपने प्यार से शादी करती है जो एक ड्राइवर होता है।

- **बुनियादी सुविधाओं की कमी:**

  उपन्यास ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य देखभाल, शिक्षा और बुनियादी ढांचे जैसी आवश्यक सेवाओं की अपर्याप्त उपलब्धता को दर्शाता है। मोरवाल शहरी और ग्रामीण विकास के बीच असमानता पर प्रकाश डालते हैं, जो ग्रामीणों के जीवन की गुणवत्ता को प्रभावित करती है।

इन विषयगत अन्वेषणों के माध्यम से, भगवानदास मोरवाल का "रेत" उपन्यास भारत में ग्रामीण जीवन का एक सूक्ष्म चित्रण प्रदान करता है इसके साथ ही गहरे सामाजिक मुद्दों को उजागर करता है और सामाजिक परिवर्तन और न्याय की वकालत करता है। उपन्यास के पात्र इन चुनौतियों से निपटते हैं। पाठकों को ग्रामीण अस्तित्व की जटिल वास्तविकताओं और गरिमा और समानता की तलाश में अंतर्दृष्टि प्रदान करते हैं।

3.2. ‘काला पहाड़’ उपन्यास का विश्लेषण

काला पहाड़ केवल एक उपन्यास का शीर्षक नहीं है, वरन् मेवात की भौगोलिक-सांस्कृतिक अस्मिता और समूचे देश में व्याप्त बहुआयामी विसंगतिपूर्ण प्रक्रिया का प्रतीक है। इसके पात्र सलेमी, मनीराम, रोबड़ा, हरसाय, सुलेनाम, छोटेलाल, बाबू खाँ, सुभानखाँ, रुमाली, अंगूरी, रोमदेई, तरकीला, मेमन, चौधरी करीम हुसैन व चौधरी मुर्शीद अहमद आदि ठेठ देहाती हिन्दुस्तान की कहानी कहते हैं। मेवात के ये अकिंचन पात्र अपने में वे सभी अनुभव, त्रासदी, खुशियाँ समेटे हुए हैं, जो किसी दूरदराज़ अनजाने हिन्दुस्तानी की भी जीवन-पूँजी हो सकते हैं।

प्रस्तुत उपन्यास काला पहाड़ के साए में फैले एक ग्रामीण अंचल की कहानी मुसलमान मेव सलेमी के माध्यम से प्रस्तुत करता है जिसने भाईचारे से भरा अतीत देखा ही नहीं जिया भी था और असहिष्णु वर्तमान उसकी हर झुर्री में काँटों की तरह चुभता है।

उपन्यास का काम समकालीन यथार्थ के प्रतिनिधित्व के माध्यम से अतीत को पुनर्जीवित और भविष्य के मिज़ाज को रेखांकित करना है। युवा कथाकार भगवान मोरवाल के पहले उपन्यास काला पहाड़ में ये विशिष्टताएँ हैं। काला पहाड़ के पात्रों की कर्मभूमि ‘मेवात क्षेत्र’ है। हरियाणा, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, की सीमाओं में विस्तृत यह वह क्षेत्र है, जिसने मुग़ल साम्राज्य के संस्थापक बाबर से टक्कर

ली थी और जिसने भारत की 'मिलीजुली तहज़ीब' को आजतक सुरक्षित रखा है।

यह उपन्यास भारतीय समाज की सशक्त मानसिकता की ओर संकेत करते हुए भिन्न-धर्मीय जनता के अपसी रिश्तों की जटिलताओं को उद्घाटित करता है। एक तथ्य यह भी है कि मानवीय समाज धार्मिक तत्त्ववाद को पूर्णतः भले ही न समझ पाया हो, परंतु धर्म के नाम पर बड़ी सरलता से एकत्रित भी होता है और आक्रामक भी। बहुसंख्यक हिंदू तथा अल्पसंख्यक मुसलमानों की आक्रामकता के कारण सामाजिक उत्थान एवं उन्नति को बाधा अवश्य पहुँचती है। सलेमी अपने जीवन में हिंदू-मुस्लिम में सांस्कृतिक सौदार्ह प्रस्थापित करने का भरसक प्रयास करता हैं लेकिन दुर्भाग्य से अंत में वह अपने मकसद में कामयाब नहीं होता।

"विजय बहादुर सिंह 'काला पहाड' उपन्यास में वर्णित साम्प्रदायिक सौहार्द के संदर्भ में लिखते हैं- काला पहाड़ की छाया में बसे नोह, बड़कल, नगीना, घसिड़ा उपरलीधों और साकरस आदि गाँवों के सघन सामाजिक रिश्तों और बुनावटों को जीने और साकार करने वाले उन मेवातियों की कहानी कहता है जो सत्ता की राजनीति करने वालों से लगभग अप्रभावित रहकर जब-तब उनकी विध्वंसक और सांप्रदायिक राजनीति का मुंहतोड़ जवाब देकर अपने पाठकों के मन में यह उम्मीद पैदा करता है कि धर्मवाद और सत्तावाद की टुच्ची राजनीति से कहीं बड़ी राजनीति है मानव-संबंधों की। न केवल सलेमी और छोटेलाल, बल्कि मनीराम

जैसे पात्रों के मार्फत यह कहने की कोशिश की गई है कि योट और सत्ता की राजनीति तब भी इस पारंपरिक सांस्कृतिक जीवन को मार नहीं पाएगी। उपन्यासकार ने एक जिद के तहत इस दृष्टिकोण को समूचे कथानक में न केवल विकसित किया है वरन इसे रेखांकित भी करता चला गया है।

काला पहाड़ की कथा भगवानदास मोरवाल के जीवनानुभवों से उपजी कथा है। उपन्यास में वर्णित पटनाओं को लेखक मात्र एक दृष्टा के रूप में ही नहीं देखता अपितु उन घटनाओं के यथार्थ को स्वयं लेखक ने जिया भी है। साझा संस्कृति के बीच साप्रदायिक तनाव जनित विघटन इस उपन्यास के कथ्य का आधार है। उपन्यास की पृष्ठभूमि में मेवात है। मेवात के निवासी मेव, जो धर्म परिवर्तित मुसलमान हैं। उपन्यास में बुजुर्ग एवं बुवा पीढ़ी के चीच वैचारिक मत-मतांतरों पर प्रकाश डालते हुए वर्तमान युवा पीढ़ी को धार्मिक सांप्रदायिक संक्रमण की अवस्था में अपने अस्तित्त्व की तलाश करते हुए दिखाया गया है।

- **सामाजिक-आर्थिक असमानताएँ**

  किसानों, मजदूरों या अन्य वंचित समूहों जैसे हाशिए पर रहने वाले समुदायों द्वारा सामना की जाने वाली असमानताओं और कठिनाइयों पर प्रकाश डाला गया है। इसमें गरीबी, शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल और बुनियादी सुविधाओं तक पहुंच की कमी से संबंधित मुद्दे शामिल हो सकते हैं।

- **शोषण और उत्पीड़न:**

उपन्यास में सत्ता के पदों पर बैठे लोगों, जैसे कि भूमिहीन भ्रष्ट अधिकारियों, या स्थानीय अभिजात वर्ग द्वारा कमजोर समूहों के शोषण को दर्शाया गया है। इसमें भूमि कब्ज़ा, जबरन श्रम या अन्य प्रकार के अन्याय के विषय शामिल हो सकते हैं।

- **पर्यावरणीय क्षरण:**

  “काला पहाड़” शीर्षक को देखते हुए, पर्यावरणीय मुद्दे भी एक केंद्रीय विषय हो सकते हैं। कहानी यह पता लगा सकती है कि पर्यावरणीय गिरावट ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के जीवन और आजीविका को कैसे प्रभावित करती है, जैसे वनों की कटाई, प्रदूषण, या प्राकृतिक संसाधनों की कमी।

- **जाति-आधारित भेदभाव:**

  उपन्यास भारत में प्रचलित जाति व्यवस्था और सामाजिक संबंधों, अवसरों तक पहुंच और व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर इसके प्रभाव पर प्रकाश डाला गया है।

- **राजनीतिक भ्रष्टाचार और सत्ता संघर्ष:**

  मोरवाल का काम राजनीतिक भ्रष्टाचार और स्थानीय शासन संरचनाओं के भीतर सत्ता के दुरुपयोग को संबोधित किया गया है। इसमें रिश्वतखोरी, भाई-भतीजावाद और व्यक्तिगत लाभ के लिए सार्वजनिक संसाधनों में हेरफेर के विषय शामिल हैं।

- **ग्रामीण जीवन का संघर्ष:**

  ग्रामीण पात्रों के नजरिए से, उपन्यास दूरदराज के इलाकों में रहने वाले लोगों की रोजमर्रा की चुनौतियों और आकांक्षाओं को चित्रित करता है, जो सीमित समस्याओं से जूझ रहे हैं।

कुल मिलाकर, “काला पहाड़” संभवतः एक सम्मोहक कथा प्रस्तुत करता है जो न केवल मनोरंजन करता है बल्कि समकालीन भारतीय समाज के सामने आने वाले गंभीर सामाजिक मुद्दों पर भी विचार करने के लिए प्रेरित करता है। उपन्यास के पात्र और घटनाएँ व्यापक सामाजिक-राजनीतिक परिदृश्य के प्रतिबिंब के रूप में काम करते हैं, जो पाठकों को हाशिए पर रहने वाले समुदायों द्वारा अनुभव की जाने वाली जटिलताओं और कठिनाइयों की गहरी समझ प्रदान करते हैं।

3.3. 'रेत' और 'काला पहाड़' उपन्यास का तुलनात्मक अध्ययन

'रेत' और 'काला पहाड़' दोनी ही भगवानदास मोरवाल के महत्वपूर्ण उपन्यास है, जो समाज के विभिन्न पहलुओं पर ध्यान केंद्रित करते हैं। यहाँ हम 'रेत' और 'काला पहाड़' की तुलना करते हैं।

- **विषय**:

भगवानदास मीरवाल के रेत उपन्यास में मुख्य विषय सामाजिक समस्याओं, सांस्कृतिक धुनीतियी और इंसानियत के मूल विचारों पर ध्यान दिया गया है। यह एक ऐतिहासिक उपन्यास है जो भारत के ठामीण ओवन और उसकी सामाजिक धरोहर पर ध्यान केंद्रित करता है।

काला पहाड में मुख्य विषय परिष्टितियों के आधुनिक रूप से प्रभाव, व्यक्ति की अंतरगानवीय संघर्ष और उनके व्यक्तित्व विकास पर ध्यान दिया गया है। यह एक समकालीन उपन्यास है जो अविष्य की आशाओं और नकारतमकताओं के बीच एक मानव की आत्मा की खोज को दर्शाता है।

- **कहानी**:

रेत में कहानी एक सामाजिक कार्य के माध्यम से व्यक्त होती है, जिसमे प्रमुख मात्र भगवानदास मोरवाल की कहानी है, जिसे अपनी जमीन की लड़ाई में में अपने सामाजिक और व्यक्तिगत मूल्यों के लिए लड़ते हुए दिखाया गया है।

काला पहाड़ में कहानी एक व्यक्ति की आत्मा की खोज और उसके संघषों को दर्शाता है। यहां कहानी की धारा एक व्यक्ति के विचार और अंतर्मन से जुड़ी होती है ओ अपनी आशाओं और भाइयों के बीच लड़ता है।

- **पात्र:**

'रेत' उपन्यास में भगवानदास मोरवाल ने गाँव के विभिन्न पात्रों को विस्तार से व्यक्त किया है, जो अपने आत्मिक संघर्षों और सपनों के साथ जूझते हैं।

'काला पहाड़' उपन्यास में भी, पात्रों के विकास और संघर्ष को बखूबी व्यक्त किया गया है, जो गाँव की गरीबी और असमानता के खिलाफ लड़ते हैं।

- **सामाजिक संदेश:**

'रेत' से सामाजिक और राजनीतिक परिदृश्यों को व्यक्त किया गया है, जो गाँव के विकास और न्याय के मुद्दों पर ध्यान केंद्रित करते हैं।

'काला पहाड़' उपन्यास में भी समाजिक न्याय और गरीबी के खिलाफ लड़ाई को सामाजिक संदेश के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

- **प्रेरक तत्व:**

रेत उपन्यास में प्रेरक तत्व सामाजिक न्याय और सामाजिक समृद्धि की दिशा में। प्रशिक्षण प्रधान करता है। इसमें ग्रामीण जीवन का प्रतिविंद किया गया है और सामाजिक सुधार की दिशा में प्रेरणा प्रधान की गई है।

काला पहाड़ उपन्यास में प्रेरक तत्व व्यक्ति की अंतरमानवीय विकास और व्यक्तिगत उत्कर्ष की दिशा में है। यहां व्यक्ति के अंदर छुपी शक्तियों और संवेदनशीलता की खोज को उज्ज्वल किया गया है।

- **भाषा और साहित्यिक उपकरण:**

दोनो उपन्यासों में भाषा का प्रयोग साहित्यिक और सामाजिक संदेशों को प्रकटकर्म के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है।

इस रूप में, दोनों उपन्यास समाज की समस्याओं को समझने और उन्हें सुलझाने के लिए महत्वपूर्ण रूप से योगदान करते हैं, लेकिन उनका पारंपरिक संदेश और कहानी का प्रस्तुतिकरण अलग-अलग हो सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1. मोरवाल भगवानदास, रेत, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, पहला संस्करण 2008, पृ. 111

चौथा अध्याय : 'रेत' और 'काला पहाड़' उपन्यासों की भाषा शैली

4.1. 'रेत' उपन्यास की भाषा

भाषा वह साधन है जिसके द्वारा हम अपने विचारों को व्यक्त करते हैं। भाषा भावो और विचारों की सफल तथा संपूर्ण अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। यह मूलतः सामाजिक वस्तु है, जो सामाजिक व्यवहार द्वारा अर्जित होती है। किसी कृति के पूर्ण तथा सार्थक विवेचन के लिए भाषा शैली का पक्ष अत्यंत अनिवार्य होता है। भाषा द्वारा साहित्यकार अपने विचारों तथा भावों को पाठकों के सामने प्रस्तुत करता है।

भगवानदास मोरवाल का संबंध हरियाणा के मेवात जिले के नगीना कस्बे से हैं. नगीना उनकी जन्मस्थली है। उन्होंने अपने अधिकांश उपन्यासों की पृष्ठभूमि मेवात ही रखी है। मोरवाल के साहित्य में सर्वत्र मेवात है, इस क्षेत्र का उसकी सूक्ष्मताओं समेत अंकन करने के लिए यहाँ की स्थानीय बोली मेवाती का प्रयोग करना लेखक को अपरिहार्य था। अतः शोध की दृष्टि से विषय को न्याय देने के लिए यहाँ मोरवाल द्वारा प्रयुक्त मेवाती बोली का उसकी विशेषताओं समेत विवरण प्रस्तुत करना समीचीन होगा।

‘रेत’ उपन्यास के पात्र हिंदी भाषा का प्रयोग करते हैं। उपन्यास में कमला बुआ, रूक्मिणी, वैद्यजी आदि पात्रों के जो संवाद हैं, उनसे ज्ञात होता है कि वह परिनिष्ठित हिंदी का प्रयोग करते हैं। कंजर जनजाति के अधिकांश पात्र भी हिंदी का ही प्रयोग करते हैं। इनकी शब्दावली हिंदी की ही है, परंतु वाक्य-विन्यास में अनायास ही ऐसे शब्दों का प्रयोग वे कर लेते हैं, जो उनकी अपनी शैली के अनुकूल है।

मेवाती बोली –

मेवाती हरियाणा व राजस्थान के मेवात क्षेत्र में बोली जाने वाली एक सामान्य साधारण बोली है। यह राजस्थानी की एक उपभाषा/बोली या उपबोली हैं।

भगवानदास मोरवाल जी के रेत उपन्यास में भी अनेक जगाओ पर कमला बुआ, जो इस उपन्यास की एक मुख्य पत्र है उनके मुंह से इस बोली का प्रयोग होते हुए हमे दिखाई देता है।

- “‘**बैद्जी, मरे कहां रहा गत्ते दिन?**’ मुंह में अठखेलियां करते ‘हुस्न बाग’ के किणकों को चुबलाते हुए, शिकायत की कमला बुआ ने।”[1]
- **“तो मरी फिर बताए न, क्यों हमारी सांस रोक राक्खी है।”**[2]

अंग्रेजी शब्द –

उपन्यास भाले ही आदिवासी जीवन पर आधारित रहा हो लेकिन लेखन ने उसमें आज की प्रचलित अंग्रेजी भाषा के अनेक शब्दों का खूब प्रयोग किया है। जैसे की –

नेशनल हाइवे, क्लिनिक, स्टूल, डॉक्टर, टीचर, पाऊच, ग्लास, काफी, आइटम, रिटायर, प्रॉपर्टीज, एल्कोहोल, एक्ट, रजिस्ट्री, टॉर्च, प्लैनिंग, मजिस्ट्रेट, नोटिफाई, लीडर, रोल मॉडल, ट्रे, प्लेट, टीवी, अंकल, पैडल, जीप, फ्रिज, पुलिस, लाइन, व्हिस्की, मिनट, लिस्ट, साइकिल, डीजे, ब्रेड, जूस, डांस, टाइम, हेयर पिन, पार्टी , रोल एस्टेट, कैंटीन, हारमोनियम, नोट, बल्ब, कप्तान, जेलर, स्टार्ट, लॉक अप, क्रिमिनल, बैन, डिटेल, रिपोर्ट, कप, पेग, प्रोग्राम, पेपर वेट, रिकॉर्ड रूम, डायरी, पोस्टिंग, गुड, नोटिस बोर्ड, अपील, परेड, पावर, लावा, जज, फाइल, सब डिवीजन, इंचार्ज, प्रमोशन, चैन, लीटर, ब्लैडर, हैड लाइट्स, ड्रेसिंग टेबल, लिपस्टिक, क्रीम पाउडर, पीसीओ, एसटीडी, कम्युनिकेशन सेंटर, फोन, नंबर, मोबाइल, पेन पेंसिल, टेलीफोन,डायल, पैकेट, इमोशंस, डीपकट ब्लाउज, मैम, दुबई, हैंडपंप, मशीन, एड्स, इन्फेक्शन, एक्टर, एडवांस, ड्राइवर, सीट, ट्रक, फ्रि, बैंक, जींस टॉप, चैनल, ऑन, रिमोट, एसी, सिगरेट, रेट, कोर्ट, कंट्रोल, लॉक, बटन पैड, स्क्रीन, मिस्ड कॉल, कैसे, मेनू, ड्यूटी रूम, हैंगर, रिंगटोन, शर्ट, बेल्ट, कॉल, सन्डे, हॉर्न, गियर, फॉर्मूला, ब्रेक, कंपनी, कॉलर, प्लीज, स्कूल,

इंटरनेशनल,पूल, हैलो, सैल्यूट, फ्लैग, विस्फोट, ऑफ, रोग, सिल्क, कार, मिनरल वॉटर, डाइटिंग, ऑर्डर, ईस्ट हाउस, कॉलबेल, रिकमेंड, सलाद, सेकंड, प्लान, मीटिंग, शिफोन, वाइपर, पार्क, स्विच, चिप्स, लवली, मूड, रोमांटिक, ब्रीफकेस, ट्यूब लाइट, नाइट लैंप, नर्सिंग होम, मीडिया, वार्ड, अमेरिका, गैरेज, फ्रेम, रेलवे, पब्लिक, गारंटी, प्रोजेक्टर, रील, लाउडस्पीकर, बैनर, एपिसोड, साइन बोर्ड, परमानेंट, रिबन, एल्यूमीनियम, वैन, प्रेशर, सर्किल, ऑटो रिक्शा, इलेक्शन, प्लास्टिक, डेवलपमेंट, वोट, रिजाइन, सरप्राइज़, मेंबर, बाथरूम, शावर, शैंपू, लेट, हीरोइन, ड्रेस, डाइनिंग हॉल, फार्म हाउस, स्मार्ट, स्विच बोर्ड, फोटो, मार्केट, टिकट, डिमांड, ट्रेनिंग, पार्टी ऑफिस, चेक, टेंपो, बंडल, फार्म, करेंट, कमिटेड, मर्डर, ब्लैकमेल, ब्रेकिंग न्यूज़, टॉयलेट, फंड, पॉलिथीन, विजुअल, लाइव टेलीकास्ट, टीआरपी, कैमरा, वॉच डॉग, एनजीओ, एक्टिविस्ट, लाइसेंस, टेलीविजन सेट, केबल ऑपरेटर, स्पीकर ऑन, पैनल डिस्कशन, सैंडल, कैबिनेट, फ्लैश, पोस्टर, पर्स, बुक।

उर्दू शब्द –

- बाजार
- ऐतराज
- ऐस्तेमाल

- महफिल
- ग़श
- फांख्ता
- जनाब

अपशब्द –

- स्याली
- फद्दू
- मादरजाद
- नंगा

कहावतें –

कहावतें एक संक्षिप्त, पारंपरिक कहावत है जो मूल्यवान सत्य बताती है। कहावतों की सबसे आम विशेषता उनकी संक्षिप्त और सरल व्याकरणिक संरचना है।

रेत उपन्यास में भी हमें अनेक कहावतों का प्रयोग देखने को मिलता है।

"तभी किसी ज्ञानी ने कहा है कि **ख़िलावड़ी का बुढ़ापा और वकील की जवानी बड़ी बुरी होती है**।"[3]

- "यह तो वो बात हो गई कि **घर का जोगी जोगड़ा, आन गांव का सिद्ध**।"[4]
- बुआ ने पास आने की भी प्रतीक्षा नहीं की और वहीं से उलाहना देते हुए बोली "कहां रहा मरे इत्ते दिन ? जब जरूरत होती है तब तू भी **गधे के सिर से सींग गायब हो जाए है"**।[5]
- "मन हो मन मुस्कराने लगी वह यह सोचकर कि **ना नौ मन तेल होगा, ना राधा नाचेगी**।"[6]
- "यह खूब कही सरपंच कि **चित्त भी मेरी पट्त भी मेरी अंटा भी मेरे बाप**।"[7]
- "इसने तो यह बात कर दी कि **मुंह लगाई डोमनी और गाए ताल बेताल**।"[8]
- "सच कहा जाए तो आज पहली बार इस कहावत को लज्जित – सा होना पड़ा कि **पुरुष का खाना और स्त्री का नहाना बराबर** होता है।"[9]

मुहावरे –

- "पूछ ले सारे से घर को बुलाके, अभी हो जाएगा **दूध का दूध और पानी का पानी**।"[10]

शायरी –

- "हमारे सामने अंजाम क्यों नहीं आता

  वो चांद खुलके लबे – बाम क्यों नहीं आता।"[11]

- "जरा बताओ तो ये आप और तुम क्या है

  तेरी जुबां पै मेरा नाम क्यों नहीं आता

  पढ़े तो कैसे पढ़े कोई कोरे काग़ज़ को

  लिखा हुआ तेरा पैगाम क्यों नहीं आता

  यो सह रहे हैं गई रात आहटो का सितम

  वो शख्स घर पै सरे – शाम क्यों नहीं आता"[12]

गीत –

- "ओ बेदर्दी सुपने में आ जा

  कुछ तो बिपतिया कम हाई जाऽऽए

  हम ही ना जानियो साजन

  नैना के मिलकै जुलुम होई जाए

चाँद गगन से झाँके

मोहे पापी दुनिया ताने देवे

खुलके कहूँ तो होए रुसवाई

चुप माँ जियरा भसम होई जाए

ओ बेदर्दी सुपने में आ जा

कुछ तो बिपतिया कम...।"[13]

आंचलिक शब्द –

- बिचौलिए
- कज्जे
- मत्था ढकाई
- नकबजनी
- नाग
- भुइयां

- खद्दरधारियों
- एक्टरनी
- डलेवर
- हरदुआर

4.2. 'रेत' उपन्यास में अभिव्यक्त शैली

शैली को अंग्रेजी में 'style' कहते है। कहानी, उपन्यास, निबंध, नाटक हर विधा का ढाँचा अलग अलग होता है। लेकिन शैली रचनाकार की होती है। वर्णनात्मक, संवादात्मक, संस्मरणात्मक, रेखाचित्रात्मक, आत्मकथानात्मक, डायरी, पत्रात्मक, छायाचित्रात्मक आदि शिल्पों का प्रयोग है, जिस प्रकार के शिल्प होते है उसी प्रकार की रचनाकार की शैली होती है। प्रत्यक रचनाकार अपने भावों और विचारों को विशेष पद्धति से अभिव्यक्त करने का प्रयास करता है, उसे ही शैली कहा जाता है। प्रस्तुतीकरण का ढंग ही शैली होती है। शैली का संबंध सिर्फ साहित्य से ही नहीं बल्कि साहित्यकार से भी होता है।

वर्णनात्मक शैली :

- **"लगभग पाँच सौ वर्ग गज जमीन पर बना विशाल मकान। बाहर प्रवेश द्वार के बग़ल में जैटस्टोन अर्थात् संगमूसा के दो बाई डेढ़ फुट के आयताकार पत्थर पर अंग्रेजी के बड़े-बड़े शब्दों में खुदा 'कमला सदन'। इस पट्टिका पर 'कमला सदन' के ठीक ऊपर खुदी ओऊम् की आकृति** को, पिछली बार की तरह वैद्यजी ने उसे एक पल रुककर प्रागैतिहासिक काल के किसी शिलालेख की तरह निहारा और फिर अन्दर प्रवेश कर गया।"[14]

- **“खुली छत से आकाश में झूलती तारों की झीनी चादर से टिमटिमाते हुए तारे ऐसे दिखाई दे रहे हैं, मानो सितारों से जड़ी स्याह ओढ़नी पर ओस की बूँदें चमक रही हैं। वैशाख के शुक्ल पक्ष का महज तीसरा दिन होने के कारण नवजात शिशु-सा चन्द्रमा भी ज़्यादा देर तक इन्तजार नहीं कर पाया।”**[15]

- “एक लम्बा हुंकारा भरते हुए थानेदार केसर सिंह ने जैसे खुद से कहा, ‘**कंजर यानी कननन्वरा, काननचर अर्थात् जंगलों में घूमनेवाला। प्राचीन भारत की सबसे प्रमुख खाना-बदोश जाति। उत्पत्ति माना गुरु और नलिन्या। माना गुरु यानी दिल्ली के मुसलमान बादशाह के मल्लू-कल्लू नाम के दो पहलवानों को हरानेवाला आदिवासी। नेस्फ़ील्ड के अनुसार कंजरों की सात उपजातियाँ हैं, किन्तु हैं मुख्य चार ही अर्थात् कुछबन्ध जो झाड़ू बनाते हैं। पत्थरकट, जो पत्थर काटते हैं। जल्लाद, जो मरे हुए जानवरों को उठाने के साथ-साथ फाँसी भी देते हैं और रच्छबन्ध, जो जुलाहों का करघा बनाते हैं।**”[16]

- “गहरा सांस ले रुक्मिणी कुछ क्षण रुक कर फिर बोली, बैद्जी, **यह रुक्मिणी तो ऐसी रेत है जिसे जैसी चाहे हवा अपने साथ उड़ा ले जाए...जैसा**

चाहे पानी बहा ले जाए और तो और जिसके जी में आए अपनी मुट्ठी में कैद कर ले जाए।”[17]

- “पिंकी अपनी बम्बईवाली मौसी के पास एक महीना क्या रहकर आई कि **उसका तो कायाकल्प ही हो गया। उसकी बातों और उसके आचरण को देखकर अनुमान लगाना कठिन है कि कैशोर्य की दहलीज़ पर अभी-अभी पाँव धरनेवाली पिंकी एक महीने में कैसे इतनी परिपक्व हो गई? महीनेभर में उसके रूप और लावण्य में ऐसा निखार आ गया कि एक बार तो खुद कमला सदन को अपनी आँखों पर भरोसा-सा नहीं हुआ। अपनी हमउम्र किशोरियों से वह जिस ऊँचाई से बातें करने लगी, उससे ये किशोरियाँ ईर्ष्या, हीनता और कुंठा से तप उठतीं। पूरी गाजूकी की किशोरियों के लिए पिंकी एक ‘रोल मॉडल’ बन गई।”**[18]

संवादात्मक शैली :

- "बुआ, माँग तो मेरी तीन की है।" जवाब लड़की के ताऊ की जगह उसके पिता ने दिया।

  “तीऽऽन, बावला हुआ है। कोई नीम के पत्ते हैं कि जो तूने कहा और मैंने दे दिए।”

“फिर तू बता बुआ?” लड़की के पिता ने गेंद कमला बुआ के पाले में सरकाते हुए कहा।

“देख, सगाई पक्की करनी है तो दूँगी पूरे दो... नहीं तू अपने घर और मैं अपने...”

“नाराज मत हो बुआ, आराम से बैठ!” लड़की के ताऊ ने कमला बुआ को मनाते हुए कहा।

“देख बुआ, छोरी जबर है... सुघड़ है। अगर तीन देने हैं तो अभी मँगाऊँ हल्दी-सिक्का...”

- “यह क्या है बुआ?”

“छोटी-सी बिदाई है मेरी तरफ से।”

"बुआ, अगर महफिल में आई सारी चढ़ाई ऐसे ही बिदाई में बाँट देगी, तो बेटीवालों के लिए क्या बचेगा?" तारा ने सलमा का साथ देते हुए कहा।

“पर बुआ हम तो बस-किराए की ठहर पर आई हैं।” सलमा ने याद दिलाते हुए कहा।

“सब पता है मुझे पर बेटी यह बिदाई मैं अपनी खुशी से दे रही हूँ। मेरी तरफ से मान है यह तुम्हारा।”

“यह ठीक है, पर मान भी तो मान की तरह होना चाहिए।” सलमा नाराजगी जताते हुए बोली।

“और कैसा होता है मान?” काफ़ी देर से चुप सुशीला ने हस्तक्षेप करते हुए पूछा।

“ना मौसी, हम तो उतना ही लेंगी, जितनी ठहर हुई है।“ ज्योति ने दृढ़ता के साथ कहा।

“चलो, तुम इसे तौहीन मानके ही रख लो !”

“बुआ, ऐसा ना होगा... चाहे बुरा मान, या भला मान।“ तारा ने कमला बुआ द्वारा पकड़ी गई दस हजार की गड्डी को छूने तक क़सम खा ली जैसे।

“सलमा, तुझे मेरी कसम... तुम सब मेरी मरी का मुँह देखो जो...।”

“वैसे एक बात कहूँ बुआ। भली औरत है संतो। मिले तो मना कर वापस आओ! क्या पता बच्चों के लिए ही लौट आए।”

“बैद्जी, पागल हो गया है। अब ना आने की वह। वैसे भी जो औरत यह कहती हो कि ननद तो बुआ बनी ऐश करती फिरें और वह भाभी बन हाड़ तुड़वाती रहे, वह तुझे आती हुई लग रही है।”

निरुत्तर हो गया वैद्यजी ।

“पर बुआ, वह अब करेगी क्या?”

“करेगी खिलावड़ीपना ।”

“क्याऽऽऽ!”

“तो क्या वह घर बसाने की गरज से भागी है। घर बसाना होता तो यहीं ना बसाती।”

मनोविश्लेषणात्मक शैली :

- वैसे भी कमला सदन में 'भाभी' की भूमिका क्या है, किसे नहीं पता। इसलिए उसे अब लगता है कि वह खेत में उग आई ऐसी अनचाही खरपतवार है, जिसे पानी उसकी उपादेयता के कारण नहीं, अपितु दूर तक फैली फ़सल के कारण मिल रहा है। शायद इसीलिए जिसका मन करता है, उसे जड़ समेत उखाड़कर खेत की मेड़ पर फेंक देता है। और वह फिर से हरी हो जाती है। संतो को लगता है कि उसका हरापन ऐसा ही है।

- संतो भाभी का यह कोरा वहम नहीं बल्कि उसे पूरा विश्वास है कि वह अलस्सुबह की लालिमा और ढलती शाम का रंग ही भूल गई है। उसे तो अब यह भी याद नहीं कि शाम की सिन्दूरी को उसने अन्तिम बार देखा कब था? उगते सूरज से उसका सामना आखिरी बार हुआ कब था? सच तो यह है कि उसे पता ही नहीं चलता-दिन कब निकलता, कब दोपहर होती और कब सूर्य क्षितिज में समा जाता। आठों पहर की गिनती ही भुला बैठी है वह। बल्कि अब तो मौसम के मिजाज का एहसास भी बेअसर हो गया। उस पर न सर्दी का असर होता, न गर्मी का। न बरसात का होता, न बसन्त का। कभी-कभी लगता है वह उस मछली की तरह हो चुकी है, जिसे चाहे जहाँ से काटो,

उसे दर्द ही महसूस नहीं होता। संतो अब सोचती है कि अच्छा हुआ जो पिंकी के बाद दोनों लड़के ही पैदा हुए, वरना पता नहीं उनमें से किसको मछली बन उसकी तरह अभिशप्त हो जीना पड़ता।

4.3. 'काला पहाड़' उपन्यास की भाषा

'काला पहाड़' उपन्यास में लेखक ने मेवात की विविध गतिविधियों के माध्यम से वहाँ की साम्प्रदायिकता का चित्रण किया है। जिसके कारण मेवाती समाज अनेक हानियों को झेलता आ रहा था। उपन्यास के मुख्य पात्र समेली के बचपन से बूढ़े होने की कालावधि में मेवात में हो रहे बदलावों की व्याख्या इस प्रकार की है कि हिंदू-मुस्लिम एकता का ह्रास होने वाली एक-एक गुत्थी सुलजती जाती है। यह कथावस्तु को और भी प्रभावशाली बना देते हैं। राजनेताओं के भ्रष्टाचार और षडयंत्रों द्वारा मेवात जैसा शांति संपन्न क्षेत्र एक रणभूमि बन जाता है। जो आज प्रत्येक समाज और देश भर की समस्या बन चुकी है। लेखक ने अपने उपन्यास के कथानक को इस प्रकार अभिव्यक्ति दी है कि एक-एक सामाजिक समस्या प्रत्यक्ष दिखाई देती है।

उपन्यास का मुख्य पात्र सलेमी है। जो भारत-पाक विभाजन के समय गाँधीजी के कहने पर भारत में ही रुक गया था। उसे अपने क्षेत्र की खुशहाली, आने वाली योजनाओं और राजनेताओं के वादों का बचपन से इंतजार था किंतु उसकी मृत्यु तक भी वह पूरे नहीं हो पाए। मनीराम, रोबडा, बुद्धन, बनवारी, रुमाली, मेमन, हरसाय, बाबू खाँ सुभान खाँ आदि की उपस्थिति उपन्यास को और भी रोचक बना देते है। चौधरी अतर मोहम्मद और चौधरी करीम हुसैन जैसे राजनेताओं के

चलते नगीना जैसे कई क्षेत्र अपनी साम्प्रदायिक सदभावना को भूलते जा रहे थे। समेली के समझाने पर स्वयं उसका बेटा बाबू खाँ तक उसे मुसलमान होने का पाठ पढ़ाने लगता है। नई पीढ़ी के पालायन के कारणों की चर्चा करता उपन्यास अपने कथा-शिल्प को नई दिशा प्रदान करता है। मेनन की कहानी 'काला पहाड़' उपन्यास की उपकथाओं में अपना मुख्य स्थान रखती है। मुस्लिम समाज की अनेक कुप्रथाओं का राज खोलता यह उपन्यास अपने दर्जनों पात्रों के साथ सही न्याय करने में सक्षम हो पाया है।

मेवाती भाषा –

मेवाती बोली पर ब्रजभाषा का प्रभाव बहुत अधिक दृष्टिगोचर होता है। उत्तरप्रदेश की सीमा से लगे भरतपुर, धौलपुर और अलवर जिलों में बृज बोली अधिक प्रचलित है।

मेवाती में कर्मकारक में लू विभक्ति एवं भूतकाल में हा, हो, ही सहायक क्रिया का प्रयोग होता है।

"हीन् बैठे सभी बुजरगो, बड़े-बूढ़े और भाइयो ! ई तो तमन्ने पतो होएगी कि आज हमारे बीच पीएम साब तसरीफ लाए हैं"[19]

अरे मनीराम, अन्यायी तू तो कह रो हो के परधानमंत्री सू पिलसण बढ़ाण की बात करेंगा पर ई तो वा ईनार-मीनार कहा बला है हून् चलोगो......?”[20]

“हम्बै यार, छोड़ो....... जितनी पिलसण मिल री है वही भुतेरी है.........चलो मोटर-वोटर तो पकड़नी है नहीं तो अमेर हो जाएगी.. ..।“ रोबड़ा ने चिंता जताते हुए कहा।”[21]

अंग्रेजी शब्द –

- ड्राइवर, बैनर, पुलिस, पीए, ट्रक, चालान, इंजन, गियर बॉक्स, स्टियरिंग, जीप, मोटर, रिक्शा, पिस्टमैन, पोस्टमास्टर, टेंपो, कार, बेल्ट, एम्बेसडर, जिप्सी, कमांडो, टायर, हॉर्न, मिनट, माइक, ग्लास, रोडवेज, बस, लाउडस्पीकर, सीट, डाइस, फ्रेम, रेलवे लाइन, कैरियर, पेंशन, वॉकी टॉकी, सैल्यूट, पोजिशन, मनी ऑर्डर, डेवलपमेंट बोर्ड, पोस्टर, गारंटी, लीडर, बॉक्स, लाइसेंस, ज्वाइंट, अवार्ड, ड्रामा, इलेक्शन, पायलट, वोट, जज, फैक्ट्री, स्कूल, डॉक्टर, फीस, बॉटल, पाउडर, मास्टर, चिमनी, होटल, करेंट, कंपनी, हारमोनियम, स्टेज, नोट, पासिंग शो, सिगरेट, बल्ब, क्लिनिक

उर्दू शब्द –

- इत्मीनान
- काफिले
- गुल्स
- रूह
- तशरीफ़
- जन्नत
- हलक
- वालैकुअसलाम
- बैतकल्लुफी
- कब्र

अपशब्द –

- जाहिल
- निठल्ले
- बहनचो

- मादरचो
- चोदे अपने बाप की छत समझ राखी है
- आतेरी दा छाणा
- कमीण
- तेरी कांटी में लकड
- छिलन
- रंडापा
- स्यातें

कहावतें –

- "बल्कि सही मायने में कहीं की ईट 'कहीं का रोंडा, भानुमति ने कुनबा जोड़ा' जैसी बेजोड़ कहावत को चरितार्थ करता हुआ यह लक्कड़बुग्गा पूरे इलाक़े की सड़कों पर सालों तक, जहाँ जी चाहता चल देता और जब चाहता अपनी मर्जी से खड़ा हो जाता था।"[22]

- "जातो-जातो या चिलम ए और भर जा!" चौधरी करीम हुसैन ने युवक को इस अंदाज़ में आदेश दिया जैसे वहाँ उपस्थित लोगों को बता रहा हो कि देखो इसे कहते हैं-**पढ़े फारसी बेचे तेल**।"[23]

मुहावरे –

- "उसने गरदन झटक कर सिपाही की ओर देखा तो सिपाही ने कोई जवाब नहीं दिया लेकिन जब ड्राइवर ने ही हाथ बाँधे विस्तार से, बेहद भोलेपन के साथ इस नए वाहन के बारे में बताया तब कहीं जाकर थानेदार की **जान में जान आई**।"[24]
- "प्रधान मंत्री के निजी सुरक्षाकर्मियों से लेकर कमांडोज़ तक के **हाथ – पांव फूल गए**।"[25]
- "कारों और जीपों के ड्राइवरों ने खूब हॉर्न बजाए लेकिन कहते है न **भैंस के आगे बीन बजाने** से कोई फ़ायदा नहीं, वही हुआ।"[26]
- "मुख्यमंत्री जी ने बेहद आंसू बहाऊ अंदाज़ में जिस तरह अपना भाषण शुरू किया, उसे सुनकर पूरी जनसभा को जैसे **सांप सूंघ गया**।"[27]
- "मंगतू की यह हालत देखकर भीड़ तो **नौ दो ग्यारह हो गई** और फंस गया बेचारा मंगतू।"[28]

- "जो सब्ज़ परी के मुजरे को देखने से सिर्फ इसलिए वंचित रह गए कि यह इस्लाम या हिन्दू धर्म के आस्तिकों के उसूलों के ख़िलाफ़ है, वे भी **मन मसोस कर रह गए** कि काश! इस सब्ज़ परी के भरे हुए संगमरमरी जिस्म पर चू आई पसीने की झिलमिलातो, शबनम-सी बूँदों को देखने का एक बार उन्हें भी मौक़ा मिल जाता।"[29]

आंचलिक शब्द –

- ठोडा
- कुणवा
- निवाज
- मुद्दत
- पोलक
- गलेप
- धेरे
- अलसेट
- डहला

- टूक
- पुरके
- हेजवाल
- भडाम्ची
- मातरभूमि
- धाड
- नौसा

गीत –

‘‘पाँच सुपारी मेरे हाथ

बामण बूझण में चली

कह बमणा मेरे मन की बसी बात

कद बगदेगो मेरो सायबा ?

जितना पीपल में पात

जब बगदेगो तेरो सायबा

मरियो बमणा का तेरो पूत

आसी-निरासी में रख दी

नणदी सू बूझण मैं चली

कह नणदी मेरे मन की बसी बात

कद बगदेगो मेरो सायबा?

आज चलेगो सारी रैन

धेरे चढ़ेगो तेरी रावटी

जिए नणदी तेरो पूत

बिछड़ो मिलायो मेरो सायवा

आधो तो दूँगी घरबार

सारो तो दूँगी मालव.....”[30]

“गुलशन में हाय सर्व-ए-खराबा नहीं है आज

इस अंजुमन में शम-ए-चिराग़ाँ नहीं है आज

थी कल तलक तो दिल में तमन्नाएँ बेशुमार

तेरे सिवा किसी का भी अरमाँ नहीं है आज

मेवात को वो दर्द मिला है कि दूर तक

जिस दर्द का जहाँ में दरमाँ नहीं है आज

मेवात जिसको मुल्क़-ए-सुलेमाँ से कम न था

मेवात का वो रश्क-ए-सुलेमाँ नहीं है आज

एहसान तेरे क़ौम के सर पे हैं बेशुमार

कुछ तेरे सर पे क़ौम का एहसाँ नहीं है आज

गुलशन में हाय सर्व-ए-ख़राबा नहीं है आज।"[31]

"धौले-धौले चावल, उजलो है भात

उजली बतोसी बनवारो नोतो

मैं तोहे बूझें मेरे सुघड़ बनड़ा, मेरे चतर बनड़ा

तेरो बनवारो री किन्ने नोतो

दादा मेरो राजा, दादी रानी होए

मेरो बनवारो री, उन्ने नोतो

बाबा मेरो राजा, माई रानी होए

मेरो बनवारो री, उन्ने नोतो

ताऊ मेरो राजा, ताई रानी होए

मेरो बनवारो री, उन्ने नोतो

धौले-धौले चावल.......।"[32]

"बनड़ा ले-ले कलम-दवात, चलो जा पढ़णा कू,

इसलामी मदरसो पास, चलो जा पढ़णा कू।

बनड़ा मैं जाणू बाबा गयो, तेरी माई पे अजब बहार

चलो जा पढ़णा कू, बनड़ा ले-ले कलम-दवात....

बनड़ा मैं जाणू काका गयो, तेरी काकी पे अजब बहार

चलो जा पढ़णा कू, इसलामी मदरसा पास.......

बनड़ा मैं जाणू मेरो भाई गयो, तेरी भावज पे अजब बहार,

चलो जा पढ़णा कू, इसलामी मदरसा पास........।"[33]

“माता! पुत्तर ऐसो जनमियो, जो जग को माँझी होए

ऐसो तो मत जनमियो, जासू तेरो जोबन रूढो होए।

मलियागर की महक सू, जाने कितना चंदन हो जाएँ रूख

एक पूत सपूत सू, सारो कुटम कहावे भूप।

एक पूत सपूत सू, समंदर तिरे जहाज

हो जाए एक कुपातर कूख में, सारा जाए कुटम की लाज।

संपत्त में सपूत में, साझो सबको होए ‘नत्थू’ काल-कपूत सू, बोसाए न कोए।”[34]

भजन –

“पिपलिया झकझाल री

जहाँ सय्यद को थान

सय्यद बड़े औलिया

अम्माँ तेरी ढो रई ब्यार

घेर लई सब गावड़ी

घेरो मोहन ग्वाल

सय्यद सोए सई साँझ के

कौन जगावन जाए?

औंधे तो धरे बिलोवणा

फिर-फिर जाएँ छछियार

सय्यद बड़े औलिया

के तो जगावे बीबी फातमा

के जगेंगे सत् भाग

सय्यद उठे ललकार के

टूटे पलँग चारों सियाल

सीधे तो हुए बिलोवणा

ले-ले जाएँ छछियार

छोड़ दई सब गावड़ी

छोड़े मोहन ग्वाल

सय्यद बड़े औलिया....।”[35]

“राम और लिच्छमन दसरथ के बेटे

दोनों बन-खंड जाएँ

एक बन, दो बन, तीजे बन में प्यास लगी

ना वाँ कुआँ, ना जोहड़

हर के घर से उठी बदलिया

बरसे मूसलधार

भर गए कुआँ, भर गए जोहड़

भर गए समंद-तलाब

हे रीऽऽ कोई राऽम मिले भगवाऽऽ न

छोटा-सा छोरा गऊ चरावे

पानी पियावे नंदलाल

हे रीऽऽ कोई राऽम मिले भगवाऽऽ न......।”[36]

“चारों पीर अरस्ते उतरे

खेलत गरद मसानी

तुम देखो लाल या सायब को बानी

बानी-बानी हले दीवानी

लाल बेग अगमानो

चार भरोटा दूब के लाओ

दो आले, दो सूखे

चार कलसिया कोरी लाओ

दो सरबत, दो पानी

चार रकेबी कोरी-कोरी लाओ

दो हलवा, दो माँढ़े

या सायब की उल्टी बानी

हाँथे खाए जिठानी

चर गए दूब, पी गए पानी

कर गए लीद निसानी

खुरीपन-खुरीपन लीद करे है

गरद उठे असमानी

पतरा बाँचत पंडूत घूमे

घर-घर घूमे मिसरानी

जब तो बनिया डली न देतो

अब री लुटावे भेली

तुम देखो लाल या सायब की बानी....।”[37]

4.4. ‘काला पहाड़’ उपन्यास की शैली

पूर्व दिप्ती शैली (फ्लैश बैक) :

- ‘काला पहाड़' उपन्यास का सलेमी अतीत के चलचित्रों में सहसा खो जाता है। अतीत में खोया सलेमी वर्तमान में हुए परिवर्तनों की तुलना बीते समय से करता है। "सलेमी एक बार फिर अतीत की खंदर में धीरे-धीरे उतरने लगा। उसे अच्छी तरह याद है जब पूरे नगीना में सिर्फ चार या पाँच महजतें थीं उपरलीाँ की महजत, जुम्मा महजत, निचल्लीाँ की महजत और कसाईन वाली वहीं महजत जिसके कंगूरों पर चढ़े सोने के पत्तरों से आज भी सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापी और सर्वकल्याणी स्वर्णिम चमक दूर से दिखाई देती है।”[38]

किस्सागोई :

- उपन्यास में प्रयुक्त किस्सागोई की शैली ने उसे पठनीय बना दिया है। “मेवात में लकड़बुग्गा आने की घटना हो या पतंगबाजी का विशेष प्रसंग हो या हसन मेवाती का किस्सा हो उनका वर्णन भी वे किस्सागों की तरह करते हैं।”[39]

- पतंगबाजी के प्रसंग का वर्णन करने के लिए मोरवाल घटना का आरंभ इस प्रकार करते हैं-"लगभग ग्यारह बजे पूरे नगीना में आग की तरह खबर फैल गई कि साकरसवाले भी पूरी तैयारी के साथ आ पहुँचे हैं। लाला नैबत राय की हवेली से लगभग पचास कदम दूर चंदू परधान की हवेली की छत उन्हें दे ती गई।"[40]
- किस्सों में उत्पन्न होने वाले प्रश्न एवं जिज्ञासाओं का शमन भी लेखक अपने विशेष ढंग से ही करता है-"आखिर वही हुआ जिसका पूरे इलाके को शक बल्कि यह कहना उचित होगा कि डर था यानी डेढ़ बसर बीतते-बीतते राज्य में विधान सभा चुनावों की घोषणा हो गई।"[41]

उपसहर

भगवानदास मोरवाल जी ने अपने लेखन के माध्यम से मेवात क्षेत्र की जनजातियों के जीवन को उजागर किया है। मोरवाल जी अपने लेखन के माध्यम से पाठकों के समक्ष समाज का एक यथार्थ रूप अभिव्यक्त करते है। उन्होंने जातिवाद को अपने लेखन में दर्शाया है। 'रेत' और 'काला पहाड़' उनके दो ऐसे उपन्यास है जो मेवात के जातिवाद को चित्रित करते है। अपने इन दो उपन्यासों की सहायता से भगवानदास मोरवाल जी ने उन अनछुए क्षेत्रों पर प्रकाश डाला है जो न जाने कितने समय से हाशिए पर थे।

भगवानदास मोरवाल जी का 'रेत' उपन्यास एक ऐसे दुर्दमय समाज की कथा है, जिसकी परंपराओं पर हम सहजता से विश्वास नहीं कर सकते। यह उपन्यास कंजर जनजाति की आस्था, धार्मिक विश्वास, समाज, संस्कृति का खुला आईना है। उपन्यास के केंद्र में कमला सदन है जहां एक ही घर की चौहद्दी में एक साथ दो अंतविरोधी परंपराएं आमने सामने टकरा रही है। खेलवाड़ी (वेश्यावृत्ति) के पेशे के साथ कमला बुआ, सुशीला, माया, रुक्मिणी, वंदना और पूनम एक ही घर के संतो और अनीता भाभी जैसी विदिवंत विवाह के बाद भाभी कही जानेवाली पतिव्रताओ के साथ रहती है। कमला बुआ उपन्यास के मातृसत्तात्मक वर्चस्व की प्रतिक है। मोरवाल जी का यह उपन्यास अद्भुत किस्सो के साथ रचा गया है।

‘काला पहाड़’ उपन्यास की कथा भगवानदास मोरवाल के जीवन अनुभवों से उपजी कथा है। उपन्यास में वर्णित घटनाओं को लेखक मात्र एक दृष्टि के रूप में ही नहीं अपितु उन घटनाओं के यथार्थ को स्वयं लेखक ने जीया भी है। साझा संस्कृति के बीच सांप्रदायिक तनाव जनित विघटन इस उपन्यास के कथ्य का आधार है। उपन्यास की पृष्ठभूमि में मेवात है। इस उपन्यास बुज़ुर्ग एवं युवा पीढ़ी के बीच वैचारिक मत पर प्रकाश डालते हुए वर्तमान युवा पीढ़ी को धार्मिक सांप्रदायिक संक्रमण की अवस्था में अपने अस्तित्व की तलाश करते हुए लिखा गया है।

भगवानदास मोरवाल ने अपने पुश्तैनी गाँव मेवात की सामाजिक, सांस्कृतिक व राजनीतिक स्थिति को यथार्थ अभिव्यक्ति प्रदान की है। उनका कथा-साहित्य पाठकों के एक खास परिवेश को देखने-समझने का विशिष्ट नजरिया प्रदान करता है ताकि लेखक के भावों को पाठक आत्मसात कर सके। लेखक का साहित्य संकेतधर्मी है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि कथाकार अपनी आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक स्थितियों का वर्णन करने के लिए कल्पनाओं का सहारा लेता है। कल्पनाओं के बिना प्रकृति और परिवेश कोरे दिखाई पड़ते हैं। कथाकार ने विविध लोकगीतों के प्रयोग से विलुप्त होती जा रही संस्कृति को जीवित रखने का सार्थक प्रयास किया है। भगवानदास मोरवाल का लेखन अपने आसपास के सामाजिक और प्राकृतिक परिवेश पर केंद्रित रहा है।

भगवानदास मोरवाल ने अपने पुश्तैनी गाँव मेवात की सामाजिक, सांस्कृतिक व राजनीतिक स्थिति को यथार्थ अभिव्यक्ति प्रदान की है। उनका कथा-साहित्य पाठकों के एक खास परिवेश को देखने-समझने का विशिष्ट नजरिया प्रदान करता है ताकि लेखक के भावों को पाठक आत्मसात कर सके। लेखक का साहित्य संकेतधर्मी है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि कथाकार अपनी आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक स्थितियों का वर्णन करने के लिए कल्पनाओं का सहारा लेता है। कल्पनाओं के बिना प्रकृति और परिवेश कोरे दिखाई पड़ते हैं। कथाकार ने विविध लोकगीतों के प्रयोग से विलुप्त होती जा रही संस्कृति को जीवित रखने का सार्थक प्रयास किया है। उन्होंने मेवाती अंचल में रेत, खेत-खलिहान, पेड़-पौधे, कुएँ-कूप, देवी-देवता, सूखा, अतिवृष्टि और उसकी विभीषिका, जलती धूप और तपती रेत, रहन-सहन, वेश-भूषा, खान-पान का विशेष रूप से उल्लेख किया है।

इसी प्रकार भगवानदास मोरवाल ने अपने उपन्यासों के माध्यम से समाज की यथार्थ स्थिति को अभिव्यक्त करने का प्रयास किया है। इनके उपन्यासों का अध्ययन करने पर पाठक मेवात के इतिहास को भली भाँति समझ सकता है। इनके उपन्यासों में सामाजिक संवेदना और जन सामान्य की वेदनाओं की बारीकियों को एक साथ देखा जा सकता है। इनके उपन्यास जहाँ शोषित और प्रताड़ित ग्रामीण जनता की आवाज बनकर उभरते हैं वहीं पुलिस के अत्याचारों की पोल खोलकर भी रख देते

हैं। इनमें प्रशासक वर्ग व राजनेताओं के भ्रष्टाचार को बड़ी ईमानदारी से रेखांकित किया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1. मोरवाल भगवानदास, रेत, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2008, पृ. 8
2. वही, पृ. 105
3. वही, पृ. 67
4. वही, पृ. 103
5. वही, पृ. 106
6. वही, पृ. 117
7. वही, पृ. 145
8. वही, पृ. 249
9. वही, पृ. 262
10. वही, पृ. 178
11. वही, पृ. 36
12. वही, पृ. 36 – 37
13. वही, पृ. 37– 38
14. वही, पृ. 07
15. वही, पृ. 34

16. वही, पृ. 43 – 44

17. वही, पृ. 111

18. वही, पृ. 120

19. मोरवाल भगवानदास, काला पहाड़, राधाकृष्ण प्रकाशन, पहला संस्करण 2004, पृ. 15

20. वही, पृ. 16

21. वही, पृ. 25

22. वही, पृ. 10

23. वही, पृ. 77

24. वही, पृ. 10

25. वही, पृ. 14

26. वही, पृ. 14

27. वही, पृ. 22

28. वही, पृ. 32

29. वही, पृ. 47

30. वही, पृ. 49

31. वही, पृ. 91

32. वही, पृ. 112

33. वही, पृ. 113

34. वही, पृ. 160

35. वही, पृ. 57

36. वही, पृ. 58

37. वही, पृ. 307

38. वही, पृ. 35

39. वही, पृ. 35

40. वही, पृ. 169

आधार ग्रंथ –

1. पाण्डेय गया, भारतीय जनजाति संस्कृति (Indian Tribal Culture), कांसेप्ट पब्लिशिंग कंपनी 2007
2. डॉ. सिंह जयवीर, आदिवासी दलित संस्कृति, हरी बुक्स दिल्ली, संस्करण 2014
3. गुप्ता रमणिका, आदिवासी : विकास से विस्थापन, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, पहला संस्करण 2008
4. झा कुमार अंजनी, मध्यभारत के आदिवासी और स्वतंत्रता आंदोलन, विवेक केंद्र प्रकाशन विभाग नवी मुंबई, पहला संस्करण 2014

5. डॉ. मुण्डा रामदयाल, आदिवासी अस्तित्व और झारखंडी अस्मिता के सवाल, आद्या प्रकाशन, 2019
6. डॉ. यादव मल पूरण, बनकर लाल नटवर, आदिवासी समाज और आधुनिकता, अविष्कार पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, 2008
7. मीणा प्रसाद केदार, आदिवासी समाज, साहित्य और राजनीति, अनुज्ञा बुक्स दिल्ली, 2014
8. अटल योगेश, सिसोदिया यतींद्रनाथ, आदिवासी भारत एक सामाजिक,सांस्कृतिक एवं विकासात्मक विवेचन, रावत पब्लिकेशंस

पत्रिकाएं –

1. वाग्मय – आदिवासी विशेषांक 1, 2013
2. वाग्मय – आदिवासी विशेषांक 2, 2014

वेबसाइट्स –

1. https://trifed.tribal.gov.in/history-of-trifed
2. https://ebooks.inflibnet.ac.in/antp05/chapter/tribes-in-india-antiquity-historical-academic-administrative-and-anthropological-importance/

3. https://pwonlyias.com/ncert-notes/evolution-tribal-communities-in-india/